छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
हिन्दी मासिक मुख पत्र
माह : ज्येष्ठ-आषाढ़, संवत् 2082
माह - जून 2025

ओ३म्

अंक 223, मूल्य 10

अग्निदूत

अग्निं दूतं वृणीमहे. (ऋग्वेद)

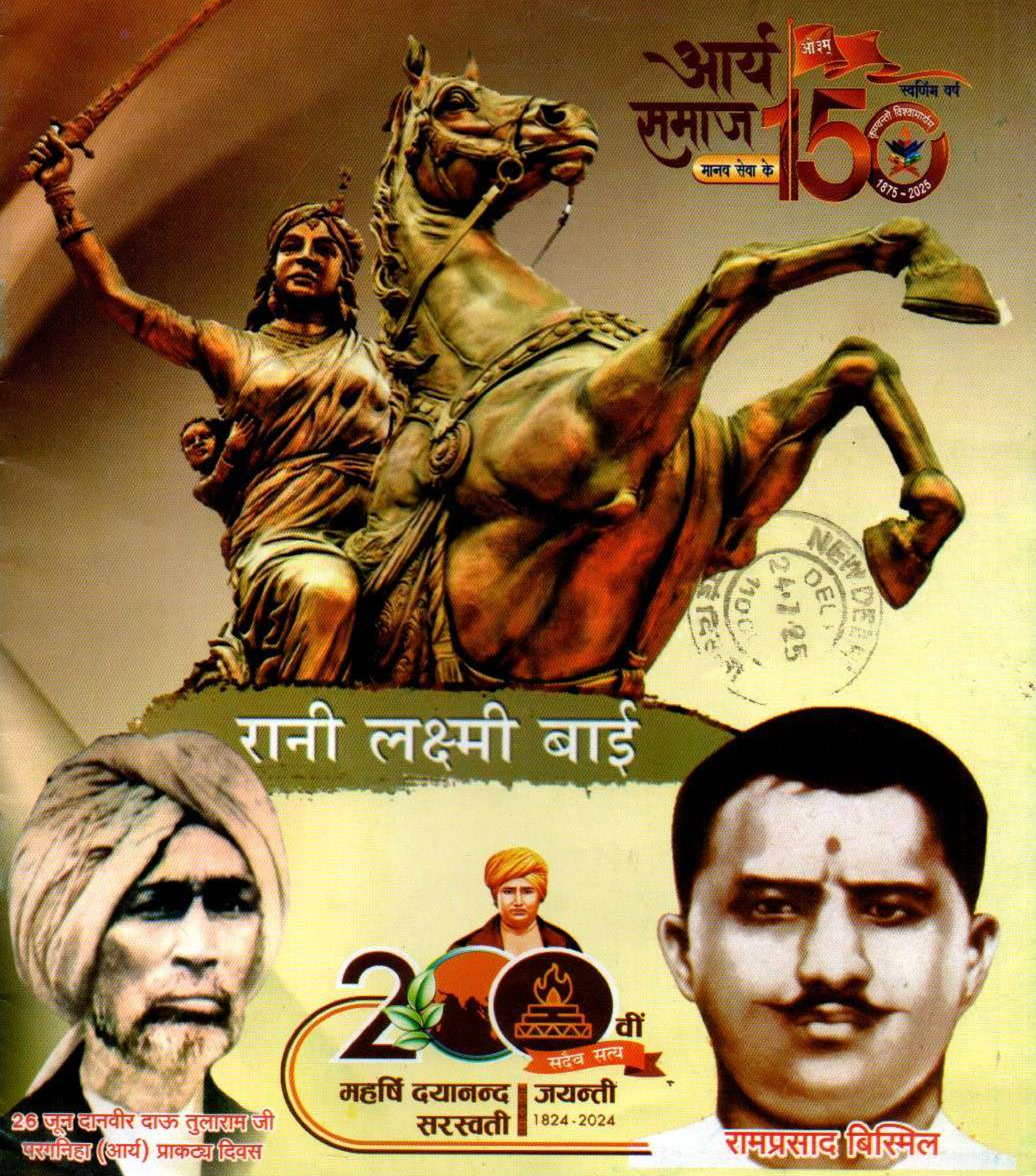

॥ ओ३म् ॥

॥ विद्याचयाऽमृतमश्नुते ॥ (वेद) विद्या से अमृत्व की प्राप्ति होती है ।

महर्षि दयानन्द आर्य उ.मा. विद्यालय

जी.ई. रोड, टाटीबन्ध, रायपुर (छ.ग.)

छ.ग. शासन–शिक्षा विभाग से मान्यता प्राप्त (पंजी. क्र. 182057)

संचालित : छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा

प्रवेश प्रारम्भ

शिक्षा सत्र : 2025–26

हिन्दी माध्यम

कक्षा पहली से दसवीं

कक्षा ग्यारहवीं–बारहवीं

(गणित, जीव–विज्ञान, कामर्स, कला)

हमारा संकल्प

शिक्षा के साथ

वैदिक संस्कार

दैनिक संध्या, हवन,

बौद्धिक विकास के साथ

नैतिक विकास

ENGLISH MEDIUM

Nursery to XI

(Math., Bio., Commerce)

सम्पर्क कार्यालय : 0771-2572013, प्राचार्य : 9179509030

विद्यालय पहुँच हेतु वाहन सुविधा उपलब्ध

अग्निदूत

हिन्दी मासिक

राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृकि, धार्मिक राजनीतिक विचारों की मासिक पत्रिका

विक्रमी संवत् - 2082

सृष्टि संवत्-1,96,08,53,126

दयानन्दाब्द - 201

प्रधान सम्पादक

डॉ. रामकुमार पटेल

प्रधान सभा

(मोबा. 7223835586)

प्रबंध सम्पादक

श्री अवनीभूषण पुरंग

मंत्री सभा

(मोबा. 9893063960)

सहप्रबंध सम्पादक

आचार्य जगबन्धुआर्य

कोषाध्यक्ष

(मोबा. 9770331191)

: सम्पादक :

आचार्य कर्मवीर

मो. ८१०३१६८४२४

पेज सज्जक : श्रीनारायण कौशिक

– कार्यालय पता –

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा

दयानन्द परिसर, आर्य नगर,

दुर्ग (छ.ग.) 491001

फोन : (0788) 4225499

e-mail : chhattisgarhsabha@gmai.com

वार्षिक शुल्क : 100/-, दस वर्षीय 1000/-

वर्ष - 20, अंक - 01 ओ३म् मास/सन् - जून 2025

श्रुतिप्रणीत-सिद्धधर्मवह्निरुपत्त्वकं
महर्षिचित्त-दीप्त वेद-सारभूतनिश्चयम् ।
तदग्निसंज्ञकस्य दौत्यमेत्य सझसझकम्.
सभाग्निदूत-पत्रिकेयमादधातु मानसे ॥

-: विषय सूची :-

			पृष्ठ क्र.
1.	सुचरित और मुक्त	स्व. रामनाथ वेदालंकार	04
2.	शिक्षा जगत् की विकृतियाँ दूर हों	आचार्य कर्मवीर	05
3.	आधुनिक विश्व में आर्यसमाज के सिद्धान्तों की प्रासंगिकता	आचार्य राहुल देव	08
4.	भारतीय जीवन दृष्टि क्या है?	डॉ. रुपकिशोर शास्त्री	12
5.	"मैं और मेरा धर्म"	मनमोहन कुमार आर्य	14
6.	प्रकाश के दर्पण में	स्वामी विवेकानन्द सरस्वती	17
7.	पाणिनि-एक विलक्षण प्रतिभा	प्रो. जैनेन्द्र शास्त्री	18
8.	क्या वृक्षों में आत्मा होती है?	डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह	19
9.	योग्य गुरु को पहचान	स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक	23
10.	आयुर्वेद सिद्धान्त	डॉ. रक्षपाल गुप्ता	24
11.	विरासत का सम्मान-योग दिवस	स्वामी अशोकानन्द	25
12.	ईश्वर कौन और परिचय	स्वामी शान्तानन्द आचार्य	26
13.	सर्वोत्तम धर्मग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश	स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती	27
14.	त्रैवार्षिक साधारण सभा एवं निर्वाचन अधिसूचना		29
15.	मधुमेह (डायबिटीज) से कैसे बचें	डॉ. वेदव्रत आर्य	31
16.	समाचार प्रवाह		33

सूचना : छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का अणुसंकेत

(ई-मेल) **E-mail : chhattisgarhsabha@gmail.com**

(सम्पादक) **E-mail : shastrikv1975@gmail.com**

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : डॉ. रामकुमार पटेल द्वारा वैदिक मुद्रणालय, छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.) पिन-491001 से मुद्रित एवं "अग्निदूत" कार्यालय-छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग) 491001 से प्रकाशित, सम्पादक - आचार्य कर्मवीर शास्त्री मोबा. नं. 8103168424, RNI No. CHH-HIN/2006/17407, डाक पंजी. छ.ग./दुर्ग संभाग/99/21-23

वेद वेदामृत

सुचरित और मुक्ति

वेद वेदामृत

भाष्यकार – स्व. डॉ. रामनाथवेदालंकार

परि माग्ने दुश्चरिताद् बाधस्व, आ मा सुचरिते भज।
उदायुवा स्वायुषा, उदस्थाममृतां अनु ॥ (यजु. 4.28)

ऋषि : **वत्सः** । देवता **अग्निः** । छन्दः **पुरस्ताद् बृहती** ॥

(अग्ने) हे परमात्मन् ! **(मा)** मुझे **(दुश्चरितात्)** दुश्चरित्र से **(परिबाधस्व)** दूर कर, **(मा)** मुझे **(सुचरिते)** सुचरित्र में **(आ भज)** स्थापित करे (मैं) **(आयुषा)** आयु से **(उत्)** उन्नत आयु से (उन्नत होऊं) **(अमृतान् अनु)** अमर-पद-प्राप्त सदेह-मुक्त एवं विदेह-मुक्त विद्वानों का अनुसरण करते हुए **(उत्-अस्थाम्)** (मोक्ष के लिए) उत्थित होऊँ।

किसी देश का वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय चरित्र कैसा है, यही उसके उत्कर्ष या अपकर्ष की कसौटी है। व्यक्ति के ही चरित्र से किसी राष्ट्र के चरित्र का निर्माण होता है। अतः मेरी कल्पना है कि मेरा वैयक्तिक चरित्र अत्यन्त उज्ज्वल हो। हे अग्ने ! हे पाप-ताप को भस्म करने वाले परमपिता परमात्मन् ! दुश्चरित्र से तुम मुझे सदा दूर रखो और सच्चरित्र में स्थापित करो। मैं ऐसा खरा सोना बन जाऊं कि पूर्ण विश्वास के साथ कह सकूँ कि मेरे अन्दर मांस, मदिरा, व्यभिचार, द्यूत-क्रीड़ा, असत्य भाषण, चोरी, हिंसा, दंभ, पाखण्ड आदि कोई दुर्व्यसन नहीं है और इसके विपरीत श्रद्धा, ईश्वर-भक्ति, क्षमा-शीलता, जितेन्द्रियता, धर्म-निष्ठा, सत्य-संकल्पता, सन्तोष-शालिता, कृतज्ञता, दान-शीलता, परोपकार, मधुर-भाषण, सद्-व्यवहार आदि सच्चारित्र्य सब विद्यमान है। जब सच्चारित्र आत्माओं की गणना होने लगे तब सबसे पूर्व लोगों की अंगुलि मेरी ओर उठे। मेरे सुचरितों की कीर्ति दिग्-दिगन्त व्यापिनी होकर मुझे अमर कर दे।

सच्चरित्र का प्रभाव मनुष्य की आयु पर भी पड़ता है। एवं सच्चारित्र्य का विकास मेरे लिए दीर्घयुष्य-प्रदायक हो। साथ ही वह दीर्घायुष्य ऐसा न हो कि मैं रोगाक्रान्त, चिन्ता-ग्रस्त, कातर और दुःखी रहता हुआ चिर-काल तक जिऊँ, अपितु मैं जीवन से अनुप्राणित, प्रफुल्ल और सुखी रहता हुआ चिर-जीवी बनूं। परन्तु सुचरित,सुख-सम्पदा, लम्बी आयु, इतना ही मेरे लिए प्राप्तव्य नहीं है, अपितु मैं मोक्ष-प्राप्ति के लिए भी उद्यमी होना चाहता हूँ। जो विद्वज्जन सदेह और विदेह-मुक्ति के अमर पद को प्राप्त कर चुके हैं उनके मार्ग का अनुसरण करते हुए मैं मोक्ष के लिए प्रयत्नशील होता हूँ। हे तेजोमय अग्नि प्रभु ! तुम मेरे प्रयास को फलवान् करो और मुझे अपनी सुखमयी गोद में आश्रय देकर असीम ब्रह्मानन्द का अधिकारी बनाओ।

1. अमृतान् प्राप्तमोक्षान् सदेहान् विगत देहात् वा विदुषः, मुक्त्यानन्दान् उत्तमान् भोगान् वा। (द.भा.)

सम्पादकीय

शिक्षा जगत् की विकृतियाँ दूर हों

सहृदय पाठकों,

एक समय था जब भारतीय यह उद्घोष करते थे –

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षरेन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

जिसका भाव है कि समस्त पृथ्वी के मानव इस देश में जन्में लोगों से अपने–अपने चरित्र की शिक्षा लें । इसीलिए भारत जगद्गुरु कहलाता था । परन्तु आज स्थिति यह है कि भारत के लोग शिक्षा के लिए विदेशियों का मुंह ताक रहे हैं । दिनोदिन शिक्षा स्तर गिरता जा रहा है । लोग दीन–हीन बनते जा रहे हैं । भारत की इस दुर्दशा की चिन्ता बहुत कम लोगों की है । अधिकांश लोग बेखबर है और जिन्हें खबर है उनमें से अधिकांश के पास बस चिन्ता ही चिंता ही है, कुछ करने की ललक नहीं है । वे अपना दायित्व ही नहीं समझते । जिनके पास दायित्व है उसमें से अधिकांश उदासीन और शेष साधनहीन है ।

शिक्षा का प्रारंभ घर से होता है । बच्चों के प्रथम शिक्षक है माता–पिता । घर को प्रथम पाठशाला की संज्ञा दी गई है, परन्तु आज स्थिति यह है कि अधिकांश माता–पिता के पास समय ही नहीं है कि वे अपने बच्चों की शिक्षा की ओर ध्यान दे सकें । वे नहीं देख पाते कि बच्चा नियमित स्कूल जा रहा है या नहीं । स्कूल का काम घर पर कर रहा है या नहीं । उसकी प्रगति कैसी है । किस विषय में कमजोर है । उन्होंने खाने–पीने, किताब–कापी, पहनने–ओढ़ने और फीस आदि की व्यवस्था कर दी, स्कूल में नाम लिखा दिया, अब बच्चा जाने और अध्यापक, उन्हें कोई मतलब नहीं । यदि माता–पिता बच्चों को भी समय देने का नियम बनायें तो शिक्षा का स्तर उठ सकता है । शिक्षित अभिभावक बच्चों की काफी कठिनाईयाँ दूर कर सकते हैं और जो शिक्षित नहीं हैं वे उनकी निगरानी कर सकते हैं कि वे पढ़–लिख रहे हैं या नहीं । अभिभावक देखें कि वे घर पर कितने समय पढ़ते हैं, कितने समय खेलते हैं और कितने समय सोते हैं। उन्हें पास–पड़ोस के पढ़े–लिखे लोगों के उदाहरणों से बच्चों को पढ़–लिखकर आगे बढ़ने को प्रेरित करना चाहिए।

क्या गांव, क्या शहर, आज कहीं भी शैक्षिक वातावरण नहीं है । शिक्षा बस,

स्कूल तक ही सीमित है। स्कूल के बाहर की दुनियां ही कुछ और ही है। बच्चे स्कूल के बाहर जाने के बाद पढ़ना–लिखना भूल जाते हैं। क्योंकि बाहर लोग अपने–अपने धन्धे में लगे हैं। यहां तक कि स्कूल से लौटने के बाद बच्चों को भी उन्हीं धंधों में लग जाना पड़ता है और उन धंधों से फुर्सत उन्हें खाने, सोने और स्कूल जाने के समय ही कहां मिलती है। यदि बच्चों में पढ़ने की उत्कण्ठा पैदा की जाये, उनके लिए पढ़ने–पढ़ाने का वातावरण बनाया जाये तो शैक्षणिक उन्नति हो सकती है।

शिक्षा का स्तर गिरने का एक प्रमुख कारण भ्रष्टाचार भी है। आज चारों ओर भाई–भतीजावाद और घूसखोरी का बोलबाला है। प्रतिभा और योग्यतायें सब एक ओर धरी रह जाती है। अयोग्य आदमी धन और सोर्स की बदौलत स्थान पा जाता है, आगे बढ़ जाता है। आज बस डिग्री महत्वपूर्ण हो गई है, योग्यता नहीं। इसलिए लोग येन–केन प्रकारेण बस, डिग्री प्राप्त कर लेना चाहते हैं और येन–केन प्रकारेण डिग्री प्राप्त कर लेने वाला शिक्षा के महत्व को कभी समझ नहीं सकता। भ्रष्टाचारियों के लिए कठोर दण्ड का विधान हो, उनके हौसले पस्त हों तथा डिग्री एक ओर रखकर प्रतिभा और योग्यता को महत्व दिया जाये तो शिक्षा का स्तर अवश्य उठ सकता है।

भारत में शिक्षा का स्तर गिरने में सरकारी नीतियों का भी महत्वपूर्ण हाथ है। आज तक देश में वही शिक्षा पद्धति चल रही है जो अंग्रेजों ने मात्र अपनी सरकार के लिए क्लर्क पैदा करने के लिए चलाई थी। भारत में अनेक प्रकार के विद्यालय है। सबका पाठ्यक्रम भिन्न और वेतनमान भिन्न। इन्हीं भिन्नताओं में एक और कड़ी नवोदय विद्यालयों के रुप में जोड़ी गई है। ये भिन्नतायें भी शिक्षा का स्तर गिरने का एक महान कारण है। शैक्षणिक स्तर के गिरने का एक कारण शिक्षकों का वेतन भी है। शिक्षकों का वेतन इस देश में अन्य कर्मचारियों की अपेक्षा न्यून है। जिससे वह बुझा–बुझा सा रहता है और जीवन की दौड़ में पीछे रहता है। जिस देश का शिक्षक जीवन की दौड़ में पीछे हों, वहाँ शिक्षा की उन्नति कैसे हो सकती है। यदि सरकार नीति बदले, शिक्षा का राष्ट्रीयकरण हो, शिक्षकों को अच्छा वेतन मिले, हर क्षेत्र में शिक्षकों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाती तो शिक्षा का स्तर ऊँचा उठ सकता है।

चाहे घर हो या स्कूल, शिक्षा संबंधी सामग्री का सर्वत्र अभाव है। सर्वप्रथम हम स्कूल को ही लें, जिनसे हम शिक्षोन्नयन की आशा करते हैं। कतिपय स्कूल ही होंगे जहां पुस्तकालय एवं वाचनालय हैं और उनमें से कुछेक में ही पर्याप्त उत्कृष्ट साहित्य एवं पत्र–पत्रिकायें आती होंगी। आज इंटरनेट का युग है। वह भी हर विद्यालयों में नहीं है। यही स्थिति अन्य सहायक सामग्रियों की भी है, वे चाहे वैज्ञानिक हों या तकनीकी। बस, विभाग खुल गये हैं, सामग्री नहीं है। यदि सहायक सामग्री उपलब्ध हो तो शिक्षा का स्तरोन्नयन हो सकता है। आज सब की यही धारणा बन गयी है कि **सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति**। अर्थात् सब कुछ धन से ही सम्भव है। अतएव सब का ध्यान जैसे–जैसे धन कमाने पर ही केन्द्रित है। घर में माता–पिता या जिस किसी की भी बात सुनिये – मुख्य चर्चा का विषय धन ही होता है। सब इसी उपाय की चिन्ता में है कि कैसे घर सोने–चांदी से भर जाये। सब लोग अपने बच्चों को पढ़ाना भी बस इसलिये चाहते हैं कि पढ़–लिख कर अच्छी नौकरी पर जायेगा, खूब धन कमायेगा और हमारा दरिद्दर दूर हो जायेगा। अतएव सभी यह चाहते हैं कि हमारे बच्चे जैसे–तैसे अच्छे अंक में परीक्षा पास कर लें। यही कारण है कि अनुदिन शिक्षा का स्तर गिरता ही जा रहा है। यदि सभी का दृष्टिकोण बदले, चिन्तन इस प्रकार का हो कि न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः आदमी धन से तृप्त नहीं हो सकता, इसलिए – साई इतना दीजिये जा में कुटुम्ब समाय। मैं भी भूखा ना रहूं अतिथि न भूखा जाय॥

तो स्थिति काफी सुधर सकती है। इससे मात्र शिक्षा का ही स्तर नहीं उठेगा वरन् आम आदमी का जीवन स्तर भी ऊंचा उठने लगेगा और देश में सुख–समृद्धि एवं शांति स्वतः आने लग जायेगी। अन्य व्यवसायियों की भांति धनिकों ने आज शिक्षा को भी धनार्जन का साधन बना लिया है। अधिक से अधिक शिक्षण संस्थायें खोल कर उनसे धन कमाना ही

उनका एकमात्र उद्देश्य रह गया है। परिणामस्वरुप अयोग्य व्यक्ति धन की बदौलत शिक्षक बन जाते हैं और बन रहे हैं। कितने तो शिक्षक भी बस नौकरी पाने के उद्देश्य से बने हैं। अन्तः प्रेरणा से प्रेरित होकर शायद ही कोई इस क्षेत्र में आया हो। किसी और नौकरी के लायक न रहे तो शिक्षक ही बन गये। इसलिए ऐसों की रुचि शिक्षा का स्तर उठाने में नहीं है। वे बस अपनी हाजिरी बजा रहे हैं। अन्य कर्मचारियों कीतरह वे भी अपने को कर्मचारी ही समझते हैं, अध्यापक नहीं।

यदि विधिवत परीक्षादेकर योग्य, देश तथा समाज के प्रति समर्पित, निष्ठावान तथा आदर्श व्यक्तियों को शिक्षक के रुप में नियुक्त किया जाये तो शिक्षा का स्तर ऊंचा उठ सकता है। आज हम जितना अन्य आवश्यकताओं पर शान-शौकत पर खर्च करते हैं उतना शिक्षा पर नहीं। शिक्षा के नाम पर बच्चे को कापी-किताब खरीद दी, हर महीने फीस दे दी, बस। इसके अलावा शिक्षा का अपना कोई बजट नहीं। शिक्षित घरों में भी न समाचार-पत्र आते हैं न पत्रिकायें। इधर किसी का ध्यान ही नहीं, यदि घर में अच्छी पुस्तकें हों, रंग-बिरंगी पत्रिकायें आती हों, घर के अन्य सदस्य उसे पढ़ें तो बच्चे भी उधर आकृष्ट होंगे और पढ़ने-लिखने की ओर प्रवृत्त होंगे। यह तो हुई अपने घरों की बात। सरकारी बजट में हम शिक्षा को सर्वोपरि नहीं रखेंगे, शिक्षा का स्तर कदापि नहीं उठ सकता। जब से शिक्षा में राजनीति ने प्रवेश किया है, तब से शिक्षा का तो भट्ठा ही बैठ गया है। अब तो छात्रों और अध्यापकों की नियुक्ति, प्रोन्नति में भी राजनीति पहल करने लगी है। राजनीतिज्ञ आये दिन छात्रों को निजी स्वार्थ हेतु भड़काते रहते हैं। जिससे छात्रों का अधिकांश समय आन्दोलन में चला जाता है। इससे शिक्षालयों में अनुशासनहीनता भी बढ़ती है। आये दिन अध्यापक अपमानित होते रहते हैं। जिस कारण अध्यापक शिक्षा से विरत हो रहे हैं। यदि विद्यालयों में राजनीति प्रतिबंधित कर दी जाये और राजनीतिज्ञ छात्रों को अपना हथियार न बनायें, गुमराह न करें तो शिक्षा का स्तर अवश्य उन्नत हो सकता है। यहां स्कूल-कालेजों में छात्रों के लिए कोई आकर्षण नहीं है। शिक्षालयों को भारस्वरुप समझते हैं। वहां पहुंच कर जैसे-तैसे समय काटना चाहते हैं। इसमें उनमें शिक्षा के प्रति अरुचि हो गयी है। उस अरुचि को दूर करने का उपाय करना होगा। स्कूल-कालेजों को ऐसा बनाना होगा, जिससे बच्चों के अन्दर शिक्षा के प्रति ललक पैदा हो। वे अधिक से अधिक समय विद्यालय में रहना चाहें, विद्यालय छोड़ने की उनकी इच्छा न हों। तब कहीं जाकर शिक्षा का स्तर ऊंचा उठ सकता है।

भारत में शिक्षा उद्देश्यहीन है। उच्च-शिक्षा प्राप्त करने के बाद जहां आदमी में सूझ-बूझ एवं साहस बढ़ने चाहिए। नैतिक उन्नयन होना चाहिए, वहीं शिक्षा पाने के बाद भी वह अपने को अपंग पाता है। वह बस अपने को बाबूगिरी के योग्य समझता है। यदि बाबूगिरी नहीं मिली तो वह असहायों-सा जीवन जीने लगता है यादेश व समाज के लिए सिरदर्द बनने लगता है। यह देखकर दूसरे भी प्रभावित होते हैं और शिक्षा के प्रति उदासीन होने लगते हैं। यदि शिक्षा को जीवनोपयोगी बनाया जावे तो लोग शिक्षा की ओर आकर्षित होंगे, उसमें रुचि लेंगे और शिक्षा का स्तर स्वतः ही ऊंचा उठेगा। भारत में शिक्षा के प्रति जन-जागृति भी नहीं है। शिक्षा में सुधार लाने के कार्य को लोग मात्र शिक्षकों व सरकार का दायित्व समझते हैं। शिक्षकों की क्या समस्यायें हैं? सरकार की क्या समस्यायें हैं? शिक्षा की समस्यायें क्या है? इस में कौन से तत्व बाधक हैं? यह सब सोचना सिर्फ सरकार का ही कर्तव्य नहीं है, लोगों को भी इस ओर ध्यान देना चाहिए। शिक्षा को आत्मोन्नति का साधन बनाना चाहिए। सत्य तो यह है कि बिना शिक्षा के आत्मोन्नति सम्भव नहीं है। जिस दिन लोगों में यह भावना दृढ़ हो जायेगी कि शिक्षा से ही हम अपनी वास्तविक उन्नति, वांछित उन्नति कर सकेंगे। उसी दिन से लोग शिक्षा की ओर झुकने लगेंगे और शिक्षा का स्तर ऊंचा उठने लगेगा। इसके लिए व्यापक प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है। यह काम प्रचारतन्त्र तो करेंगे ही, इसमें उन्हें भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होंगी जो शिक्षित है। उन्हें अपने आचरण द्वारा समाज में एक आदर्श उपस्थित करना होगा। जिससे लोगों में शिक्षा के प्रति झुकाव पैदा हो।

नान्यः पन्था विद्यतेऽयनामय। — आचार्य कर्मवीर

प्रासंगिक आधुनिक विश्व में आर्यसमाज के सिद्धान्तों की प्रासंङ्गिकता

- आचार्य राहुल देवः

(आर्यसमाज स्थापना के 150 वर्ष पूर्ति पर लेखों की पुष्माला का दूसरा पुष्प तथा आर्य प्रतिनिधि सभा अमेरिका का मुख पत्र 'नवरंग टाइम्स के मार्च-अप्रैल 25 ई.' के अंक में प्रकाशित,सादर प्रेषित।)

आज इक्कीसवीं सदी में जो भी बातें तार्किक और वैज्ञानिक होगीं वे चलेंगी। आज बुद्धिमानों की सभा में वही सिद्धान्त स्थायी रहेंगे जो सदैव प्रासंगिक रहने योग्य हैं। इस वैज्ञानिक युग में आज का मानव वैज्ञानिक सिद्धान्तों का आग्रही हैं, बशर्ते वह ज्ञान उसको पहुंचाया जाय। मनुष्य सदा से ही नवीनता और आधुनिकता को पसन्द करता रहा है विज्ञान उसके जीवन को जितना सरल और सुलभ बनाता है, मनुष्य भी उतना ही उसको आत्मसात करने के लिए तत्पर रहता है। प्रत्येक युग या कालखण्ड में मनुष्य समाज ने सदैव विज्ञान का स्वागत ही किया है। किन्तु विशुद्ध रुप से वेदों पर आधारित विज्ञान ही मनुष्य को लम्बे समय तक सुखी, स्वस्थ और सम्पन्न रख सकता है। ऐसा उसने करोड़ों वर्षों तक किया है। सृष्टि के आदि से लेकर महाभारत काल पर्यन्त तक और उसके पश्चात भी दो हजार वर्षो तक इसके प्रमाण मिलते हैं। वेदों और आर्ष ग्रन्थों पर आधारित आर्य विचारधारा ने आज विश्व पटल पर यह स्थापित कर दिया है कि वेद और ऋषियों द्वारा प्रतिपादित आर्ष ग्रन्थ और विज्ञान एक ही है। आज मनुष्य ने जो भी बड़े-बड़े आविष्कार किए हैं। उनके सूत्र वेदों में और आर्ष ग्रन्थों में प्रमाण के रुप में मिलते हैं। इसके विपरीत बाइबल और कुरान अभी तक अपनी उसी मान्यता पर टिके हुए हैं जो विज्ञान से कोसों दूर और तर्क प्रमाण के विपरीत है। आज अफगानिस्तान में तालिबान का उदय होना यह बताता है कि अब तक वे चौदह सौ वर्ष पुरानी मानसिकता से बाहर नहीं निकल पा रहे हैं और निकलना भी नहीं चाहते है। तर्क, प्रमाण, विज्ञान तथा विकास को आज भी वे अपना शत्रु मानते हैं। ठीक इसी तरह गैलीलियों ने जो सिद्धान्त बताए थे वह बाइबल से मेल नहीं खाते थे। पर आज सैकड़ों वर्ष के बाद भी बाइबल वहीं की वहीं खड़ी है और गैलीलियों के सिद्धान्त आज बाइबल के विरुद्ध जाकर सत्य के साथ खड़े है और के पाश्चात्य विद्वान गैलेलियों को मानने के लिए विवश हैं। इसके विपरीत हमारे वेद उस समय जो बात करते थे आज भी वहीं पर टिके हुए हैं मैक्स मूलर ने वैश्विक पटल पर यह स्वीकार किया था कि वेद के विषय मेंपहले वह भूल पर थे पर जब स्वामी दयानन्द की 'ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका' उन्होंने पढ़ी तब उन्होंने वेदों के सही मार्ग को जाना। यह बात तो किसी से भी छुपी हुई नहीं है। इसलिए उस समय भी हमारा वेद विज्ञान सम्मत था और आज भी है और आगे भी रहेगा। वेदों को विशुद्ध रुप से मानने वाली एकमात्र विचारधारा या संगठन आर्यसमाज है,जिसने अब तक अपनी वेदों की रक्षा करने,वेदों की मान्यताओं कोस्थापित करने और सम्पूर्ण विश्व को आर्य (श्रेष्ठ) बनाने के अपने संकल्प के साथ कोई समझौता नहीं किया है और वह निरन्तर आगे बढ़ रही है। उसने सदैव तर्क, प्रमाण और बुद्धि के आधार पर विज्ञान सम्मत होकर ही संसार को रास्ता दिखाया है। अंधविश्वास, मान्यता, आस्था के आधार पर उसने किसी सिद्धान्त को नहीं माना, जब तक कि वह सृष्टि क्रम के अनुकूल और वेद सापेक्ष न रहे हो। अतः आर्य विचारधारा की यही विशेषता इसे विश्व को

नेतृत्व प्रदान करने के लिए सक्षम बनाती है और हमें विश्व गुरु होने का आभास कराती है और प्रेरित करती है। हमें सदैव इस बात का गर्व होता है कि हम विश्व गुरु थे और हैं और आगे भी रहेंगे। इसलिए वेद को मानने वाले आर्य विचारधारा के लोग स्पष्ट रुप से यह उद्घोष करते रहे हैं कि समूचे संसार को वेद की शरण में रहना चाहिए। वेद को जानकर पढ़कर और मानकर ही इस संसार में सुख, शांति, सद्भाव, भाईचारा, मानवता अहिंसा को स्थापित किया जा सकता है।

क्योंकि जिन विचारों में नैतिकता, आदर्शवाद, उत्तम चरित्र, बन्धुत्व, सेवा, परोपकार, विश्व प्रेम, उदारता, समानता, प्रकृति प्रेम, मानवीय मूल्य और वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना होती है। उन्हें संसार से सदा के लिए कभी मिटाया या हटाया नहीं जा सकता। क्योंकि ये प्रकृति के मूल तत्व हैं और उन मूल तत्वों का आदिमूल परमेश्वर है। परमेश्वर ने ही इन मूल तत्वों को वेदों में स्थापित किया है और यही मूल तत्व वेदों के द्वारा मनुष्यों को प्राप्त हुए हैं। इन्हीं वेदों के तत्वों को आर्यसमाज अपना सार्वभौम, सर्वकालिक, सार्वदेशिक सिद्धान्त मानता है और ये सिद्धान्त हर काल में सनातन होते हैं। जब हम आर्य सिद्धान्तों की बात करते हैं तब हमारा आशय वेद के सिद्धान्त से ही है। 'आर्य' अर्थात् (श्रेष्ठ) मनुष्य, जो अपने आप को ईश्वर पुत्र मानते हैं ऐसे आस्तिक लोगों का संगठन का नाम है 'आर्यसमाज'।

आधुनिक विश्व को भोग की जगह योग की ओर चलना होगा। तभी उसकी वैज्ञानिक उन्नति औरनये नये आधिकारों की सफलता है। आर्यसमाज ने सदैव महर्षि पतंजलि के योग को सर्वोच्च माना है, आज सम्पूर्ण विश्व में जो भी भारत के योग की हलचल दिखाई देती है उसके पीछे भी महर्षि पतंजलि का अष्टांग योग है। जो पूर्णतः वेदानुकूल है वेदों पर आधारित है। इस योग से मनुष्य भोग रुपी संस्कृति से बाहर निकल सकता है। क्योंकि "भोग का अंतिम परिणाम आत्म विनाश है और योग का अंतिम परिणाम आत्मोत्थान है"।

आधुनिक विश्व की दूसरी बड़ी समस्या युद्ध है। आज विश्व में अधिकतर देश अस्तित्व और वर्चस्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। बहुत सारे देशों का यह घातक फार्मूला है कि पहले हथियार बनाओ फिर उसे बेचने के लिए देशों को लड़ाओ और फिर छद्म तरीके से सामने आकर शान्ति की बात करो। यह कैसी शान्ति है ? जहां हथियार बेचने के लिए दूसरों की भी भूमि छीनने के लिए लाखों लोगों को मौत के घाट उतार दिया जाए ? क्या ऐसे पैसों से अर्थ व्यवस्था को बढ़ाकर और विकास करके किसी भी देश और समुदाय का भला हो सकता है ? ऐसी अन्धी आधुनिकता से कभी किसी का भला नहीं हो सकता। नए-नए हथियार एवं नई-नई हथियारों की टेक्नोलॉजी का खोज केवल राष्ट्र देश की सुरक्षा के लिए होना चाहिए। आर्यसमाज यही कहता है कि "आर्य ईश्वरप पुत्रः" विश्व के समस्त श्रेष्ठ लोग एक ईश्वर की सन्तान है। "अहं भूमिमददामार्याय" मैंने यह समूची धरती श्रेष्ठ लोगों को दी है। "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः" यह समूची धरती हमारी माँ है और हम उसकी एक सन्तान हैं। इसलिए हम सब मानव परस्पर भाई-भाई हैं। अतः मानव को मानव की भलाई के लिए कार्य करना चाहिए।

आधुनिक विश्व को विभिन्न प्रकार के मत सम्प्रदायों की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि इन मत-सम्प्रदायों के चंगुल में फंसकर आज व्यक्ति, दुखी, व्यथित, परेशान एवं किंकर्त्तव्यमूढ़ हो रहा है। अधिकतर संप्रदायों में मनुष्य और स्त्रियों का शोषण एवं दोहन हो रहा है। क्योंकि इन मत सम्प्रदायों का आधार ही स्वार्थ, पक्षपात, भेदभाव, हिंसा, भटकाव, भ्रान्ति, वैमनस्य और कुटिलता है। किन्तु वेदों में कही पर भी किसी समुदाय विशेष के लिए पक्षपात नहीं है। वेद मानव सृष्टि के लिए है। वेद समूचे विश्व का कल्याण करते हैं, वेद को अपनाकर ही मनुष्य समाज में नैतिकता

और आदर्श का विस्तार किया जा सकता है । वेद चारित्रिक मूल्यों पर खरे उतरते हैं । वेद समानता की बात करते हैं । वेद में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं है । वेद विशुद्ध रुप से ज्ञान, तर्क, प्रमाण पर आधारित है । विश्व के समस्त विश्वविद्यालय को वेदों पर अनुसन्धान करना चाहिए । वेद और विज्ञान का समन्वय ही हमारी धरती को सुखी एवं सुरक्षित रख सकता है, आर्यसमाज का यही मन्तव्य है कि वेदों का अध्यात्म और विज्ञान दोनों के धरातल पर प्रचार हो ।

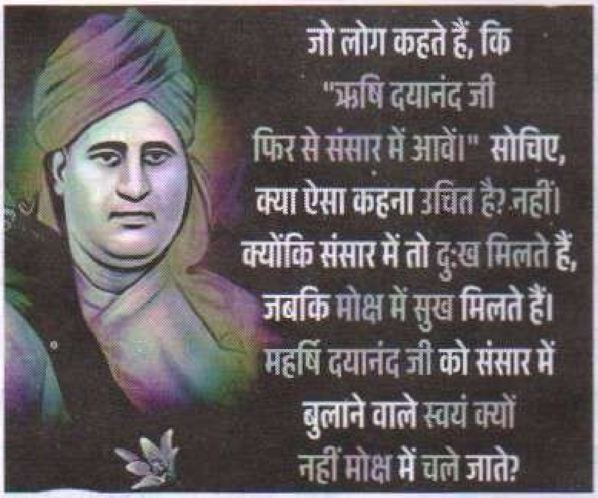

आधुनिक विश्व में मांसाहार सबसे बड़ा अभिशाप है अपनी जीभ के स्वाद के लिए जीवों को क्रूरता से मारकर खाना कितना बड़ा पाप है । वह जानवर जो स्वयं सुख, दुख, पीड़ा हानि लाभ को जानना है । वह जब कटेगा और मारा जाएगा तो उससे कितनी नकारात्म ऊर्जा निकलती है । उससे मनुष्य खुद को कैसे अलग कर सकता है । मांसाहार, अप्राकृतिक है, विनाशकारी, हिंसक, पिंडदायक, अशुद्ध, निन्दनीय, दोषकारक, रोगकारक और सृष्टि में तापमान बढ़ाकर ग्लोबल वार्मिंग का सबसे बड़ा उत्सर्जक है । मांस मनुष्य का भोजन नहीं है, मनुष्य के लिए शाकाहार सर्वोत्तम है । आर्यसमाज का भी वही मन्तव्य है "पर पीड़ा सम नहीं आधमाई" दूसरों को दुख देने से बढ़कर कोई अधर्म नहीं होता । इसलिए सम्पूर्ण विश्व को मानवता के आधार पर भोजन से मांस को हटाना ही चाहिए ।

आधुनिक विश्व को शुद्ध पर्यावरण के लिए यज्ञ को स्वीकार करना चाहिए । यज्ञ पूर्ण रुप से वैज्ञानिक है । इस पर अनेकों रचनात्मक शोध हो चुके हैं । अनेक देशों के वैज्ञानिकों ने इस पर अपना विमर्श दिया है । यज्ञ से पृथ्वी पर स्थित वायु और जल शुद्ध होता है । यज्ञ से मनुष्य का अन्तःकरण शुद्ध होता है । यज्ञ मनुष्य को महामानव बनाता है । यदि पृथ्वी और मनुष्योपयोगी रखना है, हमारी खेती फसलों को यदि शुद्ध रखना है, तो समस्त विश्व के लोगों को दुराग्रह छोड़कर यज्ञ को अपनाना चाहिए और इस यज्ञ पर और अधिक अनुसन्धान किया जाना चाहिए । आर्यसमाज यज्ञों के प्रचार का इस विश्व का सबसे बड़ा संगठन है । **"अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः"** । क्योंकि यज्ञ पूरे ब्रह्माण्ड का केन्द्र बिन्दु है ।

आज विश्व को एक 'मानव धर्म' और 'एकेश्वरवाद' पर लौटना होगा । संसार के बड़े बड़े युद्धों ने जितनी हानि मनुष्यों की और विश्व की नहीं की । उससे कहीं अधिक हानि, धर्म, मत, मजहब, पन्थों की कट्टरता और उन्माद ने की है । यह लड़ाई पृथ्वी की सबसे घातक लड़ाई है । कितनी बड़ी विडम्बना है कि हम भगवान के नाम पर मनुष्यों का कत्लेआम करते हैं । हम भगवान के नाम पर लोभ देकर धर्म परिवर्तन करते हैं, शिक्षा, चिकित्सा और सहायता के नाम पर भोले भाले लोगों को दूसरे समुदाय में ले जाते हैं और खुश होते हैं । फिर इस भ्रम में रहते हैं कि हमारा भगवान प्रसन्न होगा ? किन्तु वेद तो 'मनुर्भव' की बात करता है । वेद समानता और मानवता की बात करता है, वेद तो मनुष्य के गुणों को विकसित करने की बात करता है, वेद तो मनुष्यों की बुराई से छुड़ाने की बात करता है, वेद धूम्रपान, दुर्व्यसन, जुआ से दूर रहने की बात करता है । वेद संयम, सदाचार, चरित्र, परिश्रम, पुरुषार्थ, आत्मोन्नति की बात करता है । वेद तो प्राणिमात्र का कल्याण करता है । वेद में एक भी बात अवैज्ञानिक, अतार्किक, अप्रमाणिक, असैद्धान्तिक और अनुपयोगी नहीं है ।

इसलिए आर्यसमाज कहता है वेदों की ओर लौटो । क्योंकि परमात्मा ने वेद का प्रकाश समस्त मनुष्य जाति के लिए किया है । वेद परमात्मा की वाणी है । वेद मनुष्य कृत नहीं है, वेद सृष्टि के आदि के हैं । वेद ज्ञान, के आदिस्रोत हैं । वेद विश्व के मानव की पहली पुस्तक है, वेद भूमण्डल का संविधान है । वेद मानव के परम हितैषी है । जब वेद उपलब्ध हैं तो हम उन्हें निष्पक्ष होकर पढ़ने का प्रयास क्यों नहीं करते हैं ?

आर्यसमाज 2025 ई. में स्थापना के 150 वर्ष पूर्ण कर रहा है । महर्षि दयानन्द सरस्वती ने 1885 ई. में मुम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की थी और उनका उद्देश्य वेदों का प्रचार-प्रसार, वेदों का पठन-पाठन, वेदों का प्रचलन, वेद की शिक्षाओं को मानना, वेद के अनुसार समस्त विश्व का संचालन करना था । उन्होंने आर्यसमाज नामक एक वैचारिक संगठन बनाया । आर्यसमाज कोई मत संप्रदाय नहीं है। यह सम्पूर्ण विश्व में वेदों को स्थापित करने के लिए एक संगठन का नाम है । तो आइये, "वेदों की ओर लौटो" इस महर्षि दयानन्द के उद्घोष के साथ हम सभी पृथ्वी के मानव वेद के अनुसार अपना जीवन यापन करें । विश्व में फैले हुए सभी वेदों को मानने वाले वैदिक धर्म और आर्यसमाज के लोगों को आर्यसमाज स्थापना दिवस की बहुत-बहुत शुभकामनाएँ ।

जब तक वेद प्रचार न होगा,
सुखी कभीसंसार न होगा।
लक्ष्य अगर उपकार न होगा,
विश्व का बेड़ा पार न होगा ।

पता -आर्यसमाज बड़ाबाजार, कोलकाता

मानव जीवन का सदुपयोग करें, मानव जीवन को श्रेष्ठ सुखमय सफल करें

हमें अपने विशेष पुण्य कर्मों के फलस्वरुप यह मानव चोला मिला हुआ है, अर्थात् मनुष्य जीवन प्राप्त करना हमारा बहुत बड़ा सौभाग्य है । इसी मानव शरीर में ही ईश्वर का जप ध्यान हवन सत्संग स्वाध्याय दान पुण्य परोपकार आदि श्रेष्ठ कार्य करना संभव है, मानव से भिन्न पशु पक्षी आदि जीव जन्तुओं के शरीर में ये सब कार्य सम्भव नहीं है ।

अतः ऐसे बहुमूल्य जीवन प्राप्त करके भी यदि उपरोक्त श्रेष्ठ कार्यो को न करें और केवल खाना, पीना, घूमना फिरना, मजा मौज आदि भोग विलास में जीवन व्यतीत कर दें तो अंतकाल में बहुत पछताना पड़ेगा। अतः अपने इस जीवन को और पुनर्जन्म को सुखमय करने के लिए कम से कम इतना तो अवश्य करें -

1. प्रतिदिन सुबह शाम ओम् अर्थात् ओंकार मंत्र, गायत्री मंत्र और महामृत्युंजय मंत्र के जप से ईश्वर की उपासना करें, ईश्वर से सुख शांति समृद्धि मिलेगी व सहनशीलता प्रसन्नता आदि गुणों में वृद्धि होगी ।
2. दिन में सुबह शाम कभी भी एक समय हवनन करें, हर दिन हवन न कर सकें तो सप्ताह में एक बार हवन करें वो भी संभव न हो सके तो प्रत्येक पूर्णिमा व अमावस्या को हवन करें, इहलोक और परलोक दोनों श्रेष्ठ होगा ।
3. प्रतिदिन कुछ समय स्वाध्याय के लिए निकालें आपका ज्ञान विज्ञान निरंतर बढ़ता जाएगा ।
4. यथा संभव दान सेवा परोपकार के लिए भी कुछ धन लगायें ।
5. समय निकाल कर सत्संग भी करें ।
6. माता-पिता गुरु आचार्य व विद्वानों का सम्मान सहयोग करें व उनकी आज्ञानुसार जीवन पथ पर आगे बढ़े, जीवन महान बनेगा ।
7. गाय, पशु, पक्षी आदि जीवों के लिए भी चारा पानी की व्यवस्था करें ईश्वर आपको कोई कमी नहीं होने देगा ।

मांसाहार मदिरापान धूम्रपान आदि दुर्व्यसनों से दूर रहे, अल्पायु न होकर दीर्घायु बनेंगे ।

- दीपाली वर्मा, भिलाई

राष्ट्र-चिन्तन

भारतीय जीवन दृष्टि क्या है?

- डॉ. रुपकिशोर शास्त्री,
प्रोफे. कांगडी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

आजकल एक बात प्रायः कही जाती है कि वर्तमान युग संघर्ष का युग है। राष्ट्र-राष्ट्र के मध्य जाति-जातियों के मध्य व वर्ग-वर्ग के मध्य संघर्ष जारी है। इतना ही नहीं भाई-भाईयों और पति-पत्नी के मध्य भी संघर्ष चल रहा है। इससे भी आगे बढ़कर आजकल तो व्यक्ति के अपने अंतर्मन में भी द्वन्द्व जारी है। चारों ओर विघटन और टूट-फूट है। कोई भी राष्ट्र या परिवार संघर्ष के इस रोग में अछूता नहीं है। आखिर इतने बड़े विश्वव्यापी बिखराव और तनाव का कारण क्या है? यह हमको जानना ही होगा।

दो जीवन दृष्टियां

हमारे अनुसार इसका सबसे पहला कारण युग का बदलाव है। युग परिवर्तन से युगबोध बदला है और उसके बदलने से जीवन मूल्य या जीवन दृष्टि बदली है। आज हम मूल्यों के चौराहे पर खड़े हैं। न तो हम अभी तक पुरातन जीवन मूल्यों को छोड़ ही सके हैं और न नवीन मूल्यों को पूर्णतया आत्मसात ही कर सके हैं, ऐसी स्थिति में एक प्रकार का सांस्कृतिक संकट उपस्थित हो गया है। नूतन और पुरातन का वह दृष्टिगत संघर्ष ही आज के हमारे संघर्ष का मूल करता है। यहाँ पर सनातन मूल्यों से तात्पर्य भारतीय जीवन दृष्टि से ही और नूतन से आशय पश्चात दृष्टि का है। इनमें से अभी हम एक भी दृष्टि को न तो पूर्णतया स्वीकार कर सके है और न ही पूर्णतया नकार सके हैं ये दोनों जीवन दृष्टियाँ दो विरोधी दिशाओं में जाने वाली सरल रेखाओं की भांति हैं। इनके अंतर को समझ लेने से हमारी बात स्पष्ट हो सकती है।

मूलतः विरोध

भारतीय या वैदिक सनातन दृष्टि जीवन प्रवाह को चिरंतन और आखण्ड मानती है जबकि आधुनिकतावादी पाश्चात्य दृष्टि जीवन को क्षणों में जीने की अभिलाषी है। इसी प्रकार भारतीय जीवन दृष्टि मानव जीवन का मूल उद्देश्य आनन्द या मूक्ति मानती है, जबकि पश्चात्य दृष्टि जीवन का उद्देश्य केवल शरीरिक सुख तक सीमित कराती है। भारतीय जीवन दृष्टि विकास के लिए सहयोग की अनिवार्य मानती है। वह प्रत्येक वस्तु अथवा व्यक्ति को एक-दूसरे का विरोधी न मानकर उसका पुरक ही स्वीकार करती है। उन्हें ज्ञान के दो दिशाओं के ध्रुव मानकर उसके विकास में सहायक मानती है। लेकिन आधुनिक दृष्टि व्यक्ति, व्यक्ति वर्ग-वर्ग, जाति-जाति, राष्ट्र-राष्ट्र पदार्थ और पदार्थ विचार और विचार तथा व्यवस्था-व्यवस्था केमध्य संघर्ष को जरूरी मानती है। विकासवादी सिद्धांत की प्रक्रिया ही वाद-विवाद और संवाद की है। वहां सहयोग के लिए गुंजाइश नहीं केवल सतत की प्रेरणा है। और तो क्या धर्म के विजय में भी उसकी यही चिंतना है। भारतीय जीवन दृष्टि यह मानती है कि हमने जो भी कुछ पाया है, यह प्रकृति और परमात्मा के उपहार के रूप में पाया है। अतः हमें उसका धन्यवादी होना चाहिए। इस विषय में विकासवादी और मार्क्सवादी अथवा आधुनिकतावादियों का यह कथन है कि मनुष्य ने जो कुछ पाया है, वह केवल और केवल उसके संघर्ष को ही प्रतिफल है, कोई ईश्वर या खुदा जैसी वस्तु नहीं है, जो कुछ हैं सो मनुष्य है। बल्कि उन्होंने तो वहाँ तक कह दिया कि खुदा से इंसान को नहीं बनाया बल्कि आदमी ने ही खुदा को अपनी कल्पना द्वारा बनाया है। ऐसी स्थिति में ऐसे लोग आत्मा परमात्मा की बात कैसे करेंगे या मानेंगे ? कैसे उस पर भरोसा करेंगे? कैसे जीवन में संतोष और अपरिग्रह के नियमों का पालन करेंगे?

भोगवाद में सदाचार असम्भव

एक और बात भारतीय जीवन दृष्टि मूलतः निवृत्तिवादी अथवा त्यागवादी रही है। उसने त्यागपूर्वक भोग को उचित माना है, जबकि पाश्चात्य दृष्टि में त्याग या संयम के लिए कहीं पर कोई स्थान ही नहीं है। वहां पर तो उन्मूल उपयोगितावाद या उपभोक्तावाद है। वहाँ पर प्रत्येक वस्तु का भौतिक प्रयोजन है। अतएव सब कुछ संसाधन है और तो क्या स्त्री और पुरुष भी संसाधन मात्र है। ऐसे स्थिति में नियम-संयम और सदाचार का क्या मूल्य हो सकता है? जब जीवन का एक मात्र चरम लक्ष्य भोगवाद रह गया हो तो फिर समाज में बलात्कार और अपहरण तथा हिंसाचार ही होगा। संयम

और सदाचार कैसे होंगे ?

प्रवृत्ति में अनन्त भूख

भारतीय जीवन दृष्टि ने प्रवृत्ति का सर्वथा विरोध नहीं किया है। बल्कि जीवन के चार परम पुरूषार्थ- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष निर्धारित किये। इनमें से बीच के दो प्रवृत्ति परक हैं, जबकि आदि और अंतिम निवृत्ति मूलक हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि हमारे यहां जीवन में भोग और योग (त्याग) का समुचित सामंजस्य रहा है। जबकि पश्चिम में उन्मुक्त उपभोगवाद हैं। हमारी दृष्टि यह रही कि निरन्तर भोग करने से हमारी कामनाएं तृप्त नहीं होती, बल्कि अभिलाषाएं और ज्यादा उमड़ती हैं। जैसा कि मनु महाराज ने कहा-

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविपा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते।।

अर्थात् जिस प्रकार में यंज्ञाग्नि में घी की आहूतियां डालने से वह और भी प्रचण्ड हो जाती है। इसी प्रकार कामनाओं को निरन्तर पूर्ति से वे घटती नहीं हैं बल्कि और भी बढ़ती हैं। वह हम व्यवहार में भी देख सकते हैं। जिसके पास साइकिल है वह स्कूटर, मोटर साईकिल पर चढ़ने को बात सोचता हैं। जिस पर ये हैं वह कार की बाते सोचता है। इसी प्रकार से जिसके पास हजार रूपये है वह लाखों की इच्छा करता है। लाख वाला अरबपति और खरबपति बनने का स्वप्न देखता रहता है। कहने का तात्पर्य यही है। कि कामनाओं का कहीं अंत ही नहीं है। तभी तो हमारे उपनिषद्कार ने कहा कि **न हि वितेन तर्पणीयो जनः** कबीर जी ने भी कहा-

तन की भूख तनक है, आध पाव या सेर।
मन की भूख अनन्त है भक्ष जाय सुमेर।।

इसी भोगवादी जीवन दृष्टि के कारण जीवन में उद्दाम भोग लालसा जगी है। सुख-सामग्री के संचय की अंधी होड़ लग गयी है। जब एक ही वस्तु के अनेक ग्राहक हो तो संघर्ष तो होगा ही। त्याग और समर्पण अथवा सेवा और सहकार आज बीते युग की बातें हो गयी हैं। सब स्वार्थी हो चले है। जहां भी स्वार्थ टकराता है तो संघर्ष हो जाता है। वह परिवार क्षेत्र हो या समाज क्षेत्र। आय के साधन स्त्रोत सीमित है लेकिन आवश्यकताए असीमित है ऐसी स्थिति में समाज में खिंचाव और तनाव तथा आपा धापी है।

स्नेह भी स्वार्थ की भेंट

अब तो पति पत्नी के मध्य से भी स्नेह सहकार की भावना समाप्त हो गयी है। आज की पत्नी पहली जैसी समर्पित नारी नहीं है। आज वह प्यार की तुलना में अधिकार को अधिक महत्व देती है। संतान भी आज माता पिता के उपकार को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है। वह अपने को मिलने वाली सुविधाओं को अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानती है। जिस समाज के अन्दर सारे मानवीय मूल्य स्वार्थ की शूली से टांग दिये गये हो उसे समाज नहीं कहा जा सकता। उसे मृत समाज ही कहा जा सकता है।

संघर्षमूलक संस्कृति समाजघाती

जिस समाज ने अपने चिरेतन मूल्यों को तिलांजलि देकर संघर्षमूलक पश्चात्य संस्कृति के मूल्य अपना लिये हो वहा समाज तो आत्मघाती समाज है। आज पश्चिम में रूपया है, पैसा है, सुख सामग्री है, सब कुछ है लेकिन शांति नहीं है, क्योंकि कहां की जीवनदृष्टि संघर्षमूलक है। हमारे वहां पर पहले चाहे इतने सुखसाधन नहीं थे, क्योंकि हमारी जीवनदृष्टि सहयोग मूलक थी। यहां पर जाति-जाति में सहयोग, वर्ग-वर्ग में सहयोग, व्यक्ति-व्यक्ति में सहयोग तथा पति पत्नी में सहयोग था। आज सहयोग के स्थाप पर अनावश्यक संघर्ष और विरोध आ गया है। लोग (त्याग) के स्थान पर उन्मुक्त भोग आ गया है। परमार्थ के स्थान पर नग्र स्वार्थ नाच रहा है। समर्पण और सेवा तथा स्नेह के स्थान पर अवसरवाद का बोलबाला है। जहाँ पर जीवन-दृष्टि इतनी विषाक्त हो चुकी है,ऐसे समाज में सुख, शांति अथवा समस्या की सार्थक कल्पना नही की जा सकतीं। यदि इस समाज को सुख का सागर बनाना है तो इसमें स्नेह और सहकार के मोती उगाने पड़ेंगे। वेदों के संगठन सूक्त का सिंहावलोकन करना पडेगा और उसका आचरण करना पड़ेगा। जिसमें सभी मनुष्यों को परस्पर भाइयों की तरह रहने का उपदेश दिया गया है। पति-पत्नि में मधुर संलाप की बात कही गयी है। भाई-बहन में स्नेह-सूत्र के बंधन का विधान है। महाभारत की मानवीय दृष्टि-**'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्'** हमारे आज के सामाजिक या पारिवारिक संघर्षों को शांत करने वाली सुधा सिद्ध हो सकती है।

वैचारिक "मैं और मेरा धर्म"

– मनमोहन कुमार आर्य

मैं कौन हूँ और मेरा धर्म क्या है? इस विषय पर विचार करने पर ज्ञात होता है कि मैं एक मनुष्य हूँ और मनुष्यता ही मेरा धर्म है। मनुष्य और मनुष्यता पर विचार करें तो हम, मैं कौन हूँ व मेरा धर्म पर विचार कर मनुष्यता का परिचय जा सकते हैं। इसी पर आगे विचार करते हैं। मनुष्य मननशील होने व स्वात्मवत् दूसरों के सुख-दुःख व हानि लाभ को समझने के कारण ही मनुष्य कहलाता है। यदि हम मनुष्य होकर मनन न करें तो हम मनुष्य नहीं अपितु पशु समान ही होंगे क्योंकि पशुओं के पास मनन करने वाली बुद्धि नहीं है। वह कुछ भी कर लें, किन्तु मनन, विचार, चिन्तन, सत्य व असत्य का विश्लेषण आदि नहीं कर सकते। अब प्रश्न उपस्थित होता है कि मनन किससे होता है और मनन की प्रेरणा कौन करता है ? इसका उत्तर यह है कि हमारे शरीर में मस्तिष्कान्तर्गत मन एवं बुद्धि तत्व, इन्द्रिय नहीं अपितु इनसे मिलता जुलता एक अलग उपकरण वा अवयव है, जो सत्य व असत्य, उचित व अनुचित का चिन्तन व विचार करता है, इसी को मनन करना कहते हैं। मन व बुद्धि नामक यह उपकरण जड़ सूक्ष्म प्रकृति तत्व की विकृति है। यह 'मैं व हम' से भिन्न सत्ता है। मैं व हम एक चेतन, सूक्ष्म, अल्पज्ञ, एकदेशी, ससीम, अल्प-परिणाम, अनादि, अजन्मा, अमर, नित्य, अजर, शस्त्रों से अकाट्य, अग्नि से जलता नहीं, जल से भीगता नहीं, वायु से सूखता नहीं, कर्म-फल चक्र में बन्धा हुआ, सुख-दुःखों का भोगता, जन्म-मरणधर्मा व वैदिक कर्मों को करके, मोक्ष कोप्राप्त करने वाली सत्ता है। मुझे यह अपना यह जन्म इस संसार में व्यापक सत्ता, जो सर्वव्यापक है तथा सच्चिदानन्दस्वरुप हैं, उसके द्वारा मुझे इस मनुष्य शरीर की प्राप्ति हुई है। यह शरीर मुझसे भिन्न मेरा अपना है और मेरे नियंत्रण में होता है। मुझे कर्म करने की स्वतन्त्रता है परन्तु उनके जो फल हैं, उन्हें भोगने में मैं परतन्त्र हूँ। मेरे शरीर की सभी पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, मन, बुद्धि आदि अवयव व तत्व मेरे अपने हैं व मेरे अदीन अथवा नियंत्रण में हैं। मेरी अर्थात् आत्मा की प्रेरणा पर हमारा मन व बुद्धि विचार, चिन्तन व मनन करती है। यदि हम कोई भी निर्णय बिना सत्य व असत्य को विचार कर करते हैं और उसमें बुद्धि का प्रयोग नहीं करते तो यह कहा जाता है कि यह मनुष्य नहीं गधे के समान है। गधा भी विचार किये बिना अपनी प्रकृति व ईश्वर प्रदत्त बुद्धि जो चिन्तन मनन नहीं कर सकती, कार्य करता है। जब हम बुद्धि की सहायता से मनन करके कार्य करते हैं तो सफलता मिलने पर हमें प्रसन्नता होती है और यह हमारे लिए सुखद अनुभव होता है। इसी प्रकार से जब मनन करने पर भी हमारा अच्छा प्रयोजन सिद्ध न हो तो हमें अपने मनन में कहीं त्रुटि या कमी अनुभव होती है। इसके पश्चात् और अधिक चिन्तन व मनन करके हम अपनी कमी का सुधार करते हैं और सफलता प्राप्त करते हैं। सफलता मिलने में हमारे प्रारब्ध की भी भूमिका होती है परन्तु इसका ज्ञान परमात्मा को ही होता है। हम तो केवल आचार्यों से अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त कर अपने मन एवं बुद्ध की क्षमता को बढ़ा सकते हैं और उसका प्रयोग कर सत्यासत्य का विचारकर सही निर्णय कर सकते हैं।

जन्म के बाद जब हम 5 से 8 वर्ष की अवस्था में होते हैं तो माता-पिता हमें आचार्यों के पास विद्या प्राप्ति के लिए भेजते हैं। आचार्य का कार्य हमारे बुरे संस्कारों को हटा कर श्रेष्ठ व उत्तम संस्कारों व गुणों को हमारी आत्मा में स्थापित करना होता है। आचार्य के साथ हमें स्वयं भी वेदाध्ययन व अन्य सत्साहित्य का अध्ययन कर व अपने विचार मन्थन से श्रेष्ठ गुणों

को जानकर उसे अपने जीवन का अंग बनाना होता है। श्रेष्ठ गुणों को जानना, उसे अपने जीवन में मन, वचन व कर्म सहित धारण करना और आचरण में केवल श्रेष्ठ गुणों का ही आचरण व व्यवहार करना धर्म कहलाता है। धर्म को सरल शब्दों में यह भी कह सकते हैं कि सत्य का आचरण ही धर्म है। सत्य का आचरण करने से पूर्व हमें सत्य की पहचान करने के साथ सत्य के महत्व को जानकर लोभ व काम-क्रोध को अपने वश में भी करना होता है। आजकल देखा जा रहा है कि उच्च शिक्षित लोग अपने हित, स्वार्थ व अविद्या के कारण लोभ व स्वार्थों के वशीभूत होकर भ्रष्टाचार, दुराचार, अनाचार, कदाचार, व्याभिचार, बलात्कार जैसे अनुचित व अधर्म के कार्य कर लेते हैं। यह श्रेष्ठ गुणों के विपरीत होने के कारण अधर्म की श्रेणी में आता है। कोई किसी भी मत को मानता है परन्तु प्रायः सभी मतों के लोग इस लोभ के प्रति वशीभूत होकर, अनेक धर्माचार्य भी, अमानवीय व उत्तम गुणों के विपरीत कार्यो को कर अधर्मी व पापी बन जाते हैं। यह कार्य हमारा व किसी का भी धर्म नहीं हो सकता।

मत और धर्म में यही अन्तर है कि संसार के सभी मनुष्यों का धर्म एक ही है और सद्गुणों को धारण करना व उनका आचरण करना ही है। इसमें ईश्वर के सच्चे स्वरुप को जानकर उसकी स्तुति, प्रार्थना और उपासना करना, प्राण वायु, अपनी आत्मा की शुद्धि व परोपकार के लिए अग्निहोत्र यज्ञ नियमित करना, माता-पिता-आचार्यों व विद्वान अतिथियों का सेवा कर सत्कार तथा सभी पशु-पक्षियों व प्राणियों के प्रति अहिंसा व दया का भाव रखना ही श्रेष्ठ गुणों के अन्तर्गत आने से मननशील मनुष्य का धर्म सिद्ध होता है।

धर्म का विस्तृत रुप हमें ईश्वरीय ज्ञान चार वेदों से प्राप्त होता है। वेदों का ज्ञान, सर्वथा सत्य, शुद्ध एवं पवित्र है। वेदों के ज्ञान की तुलना में संसार का परवर्ती इतर कोई ग्रन्थ नहीं आता। वेदानुकूल ज्ञान ही ग्राह्य एवं विपरीत ज्ञान त्याग करने योग्य होता है। वेदों का ज्ञान सृष्टि के रचियता सर्वव्यापक परमात्मा ने सृष्ठि के आरम्भ में प्रथम पीढ़ी में उत्पन्न मनुष्यों को दिया था। वेदों के सत्य अर्थ ऋषि दयानन्द एवं उनके अनुयायी विद्वानों में लगभग एक शताब्दी वर्ष प्रकाशित किये हैं। वेद में वर्णित मान्यतायें एवं मनन व चिन्तन से सत्य पाये जाने वाले सत्य सिद्धान्त एवं कर्म ही संसार के सभी मनुष्यों के लिए करणीय होने से धर्म है। आजकल जो मत-मतान्तर चल रहे हैं वह धर्म नहीं है। उनमें धर्म का आभास मात्र होता है। मत-मतान्तरों में वेदों एवं सत्य के विपरीत जो मान्यतायें हैं वह मानवता के लिए न्यूनाधिक हानिकर भी है। अविद्या से युक्त मत-मतान्तरों के अनुयायी अपने-अपने मत के स्वार्थ के लिए मतान्तरण आदि की नाना प्रकार की अमानवीय योजनाएँ बनाते हैं व उन्हें गुप्त रुप से क्रियान्तवित करते हैं जिससे समाज में वैमनस्य उत्पन्न होता है। मनुष्य मत-मतान्तरों में बंट कर एक दूसरे के विरोधी बनते हैं जैसा कि आजकल देखने को मिलता है। इसके साथ सभी मतों के अनुयायी भी ईश्वर की सच्ची उपासना, वेद प्रवर्तित ज्ञानयुक्त कार्यों को न करने और श्रेष्ठ गुणों को धारण कर उनका आचरण न करने से जीवन के उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष से वंचित हो जाते हैं। महर्षि दयानन्द (1825-1883) ने मत-मतान्तरों में निहित असत्य अविद्या वा अ-धर्म विषयक प्रवृत्तियों का संकेत किया था,

परन्तु अज्ञान, स्वार्थ व अहंकारवश लोगों ने उनकी विश्व का कल्याण करने वाली मान्यताओं की उपेक्षा की जिसका परिणाम यह हुआ कि हम लोग श्रेष्ठ गुणों को धारण कर जीवन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लक्ष्य से दूर हैं और विश्व की लगभग 7 अरब की जनसंख्या में से धर्म व त्याग का जीवन व्यतीत करने वालों सहित मोक्ष की प्राप्ति के साधनों को जानने व उन पर चलने वाले मोक्षगामी लोगों की संख्या प्रायः नगण्य है।

हम लेख का अधिक विस्तार न कर संक्षेप में यह कहना चाहते हैं कि हम सब मनुष्य व प्राणी एक जीवात्मा है और ईश्वरा हमारे पूर्व कर्मानुसार हमारा अर्थात् हमारे शरीरों का जन्मदाता है। मनुष्य जन्म मिलने पर सभी को श्रेष्ठ व उत्तम सत्य गुणों को धारण करना चाहिए। इनका आचरण ही धर्म होता है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है तथा सत्य मनुष्य धर्म व सभी विद्याओं का पुस्तक है। वेदाध्ययन करना और उसके अनुसार जीवन व्यतीत करना ही मनुष्य का धर्म है। वेद संस्कृत में हैं अतः संस्कृत न जानने वाले लोगों को सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि आदि ग्रन्थों सहित महर्षि दयानन्द सरस्वती व अन्य वैदिक विद्वानों के वेदभाष्यों व ऋषि मुनियों के अन्य ग्रन्थों शुद्ध मनुस्मृति, दर्शन व उपनिषदों का आत्मा की ज्ञानवृद्धि के लिए अध्ययन करना चाहिए। ऐसा करके हमें अपनी आत्मा के सत्यस्वरुप एवं इसके उद्देश्य वा लक्ष्य का परिचय प्राप्त होने के साथ अपने कर्त्तव्य व धर्म का निर्धारण करने में सहायता मिलेगी। मत-मतान्तरों के ग्रन्थों को पढ़कर मनुष्य भ्रान्तियों से ग्रसित होता है अथवा ऐसा मनुष्य बनता है जिसमें आत्मा व शुद्धि होने पर भी वह सर्वथा इनसे अपरिचित होता हुआ मत-मतान्तरों की सत्यासत्य मान्यताओं में फंसा रहता है। ऐसा मनुष्य लगता है कि केवल खाने-पीने व सुख-सुविधायें भोगने के लिए ही जन्मा है। खाना-पीना व सुविधायें भोगना मनुष्य जीवन नहीं अपितु इससे ऊपर उठकर सद्ज्ञान प्राप्त कर उससे अपना व दूसरे लोगों का कल्याण करना ही मानव धर्म है। हम आशा करते हैं कि इस लेख से मैं कौन हूँ और मेरा धर्म क्या है, इस विषय का कुछ परिचय पाठकों को प्राप्त होगा।

पता : 196, चुक्खूवाला-2, देहरादून 248001

तुलाराम आर्य कन्या उ.मा.विद्यालय कूंरा के विद्यार्थियों को छ.ग. प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से बधाई

प्रावीण्य सूची के विद्यार्थी 2024-25 कक्षा 12वीं

कु मिताली वर्मा

78.08%

कु उर्वशी वर्मा

78.04%

कु हर्षिता साहू

77 %

कु. मेघा कृपाल

75 %

प्रावीण्य सूची के विद्यार्थी 2024-25 कक्षा 10वीं

शिवम बंजारी

88 %

कु निहारिका वर्मा

84%

प्रेम सागर साहू

83.05 %

विवेक वर्मा

82%

कु दुर्गा देवांगन

81 %

कु मोनिका कुंभकार
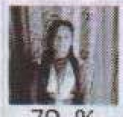
79 %

कु तनीषा वर्मा

76 %

स्वाभिमान प्रकाश के दर्पण में

– स्वामी विवेकानन्द सरस्वती

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थ जैसे–ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, सम्पूर्ण यजुर्वेद–भाष्य, ऋग्वेद भाष्य (छः मंडल एवं सप्तम मंडल के 61वें सूक्त के द्वितीय मन्त्र तक) एवं अनेक छोटे–मोटे व्यवहारभानु आदि ग्रन्थों का प्रणयन किया तथा अनेक शास्त्रार्थ भी किए, किन्तु उन सभी का मूल सत्यार्थप्रकाश है। अर्थात् जिन वेदादि सत्य–सिद्धान्तों का प्रतिपादन सत्यार्थप्रकाश में किया गया उन्हीं सत्य सिद्धान्तों का पल्लवन एवं संवर्धन अन्यत्र भी किया है। मेरे वेद प्रतिपादित सत्य–सिद्धान्तों को हृदयङ्गम करने में कोई त्रुटि नरह जाए। अतः उन्होंने सत्यार्थप्रकाश केअन्त स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश लिखा और लगभग चेतावनी के रुप में कहा कि जहां भी कहीं पर कुछ भ्रान्ति प्रतीत हो, उसको इस प्रकाश के प्रकाश में ही पाठकों को पढ़ना व देखना चाहिए। ऋषि के इस स्पष्ट निर्देस को न समझकर आर्य विद्वानों में संवाद नहीं विवाद होता रहता है। किसी कारणवश जब मैंने स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश विशेष ध्यानपूवक पढ़ा तो आश्चर्य हुआ कि स्पष्ट निर्देस होने पर भी अपने लोगों में निरर्थक विवाद क्यों ? जिन स्थानों पर भ्रम उत्पन्न होता है, उन सबका समाधान तो स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश में उल्लिखित है। आर्य विद्वान् जब इसे दुराग्रह छोड़कर एकाग्रमना पढ़ेंगे तो उनकी शंकाओं का समाधान स्वतः हो जाएगा। सत्यार्थप्रकाश या संस्कारविधि आदि ग्रन्थों को आधार बनाकर निरर्थक वाद–विवाद वितण्डावाद करना उचित प्रतीत नहीं होता है। ऋषि लिखते हैं – सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् साम्राज्य सार्वजनिक धर्म जिसको सदा से सब मानते आये, मानते हैं और मानेंगे भी इसीलिए उसको सनातन नित्य धर्म कहते हैं कि जिसका विरोधी कोई भी न हो सके। यदि अविद्यायुक्त जन अथवा किसी मत वाले के भ्रमाये हुए जन जिसको अन्यथा जाने वा माने उसकी स्वीकार कोई भी बुद्धिमान नहीं करते। किन्तु जिसके आप्त अर्थात् सत्यमानी, सत्यवादी, सत्यकारी, परोपकारक, पक्षपातरहित विद्वान् मानते हैं, वही सबको मन्तव्य और जिसको नहीं मानते वह अमन्तव्य होने से प्रमाण के योग्य नहीं होता। अब जो वेदादि सत्यशास्त्र और ब्रह्मा से लेकर जैमिनिमुनिपर्य्यन्तों के माने हुए ईश्वरादि पदार्थ हैं जिनको कि मैं भी मानता हूँ सब सज्जन महाशयों के सामने प्रकाशित करता हूँ। मैं अपना मन्तव्य उसी को जानता हूँ कि जो तीन काल में एक–सा मानने योग्य है। मेरा कोई नवीन कल्पना व मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है। किन्तु जो सत्य है उसको मानना मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझको अभीष्ट है। (स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश)

प्रारब्ध बलवाने है ! पुरुषार्थ क्रियामाण कर्म इस विषय में भी आर्य विद्वानों में मतभेद है। यहां तक कि वाग्मी श्रेष्ठ स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज भी प्रारब्ध को बलवान् (बड़ा) मानते थे, जबकि ऋषि दयानन्द सरस्वती ने स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश में स्पष्ट लिखा है – पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा इसलिए है कि जिससे संचित प्रारब्ध बनते जिसके सुधरने से जब सुधरते जिसके बिगड़ने से सब बिगड़ते हैं, इसी से प्रारब्ध की अपेक्षा पुरुषार्थ बड़ा है। (स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश–25) ये संक्षेप से स्वसिद्धान्त दिखला दिए हैं। इनकी विशेष व्याख्या सत्यार्थप्रकाश के तत्तत्प्रकरणों में है तथा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि ग्रन्थों में भी लिखी है।

पता : कुलाधिपति, गुरुकुल प्रभात आश्रम, टीकरी, भोलाझाल, मेरठ

स्वाभिमान

पाणिनि - एक विलक्षण प्रतिभा

– आचार्य जेनेन्द्र शास्त्री

पाणिनि (500 ई.पू.) संस्कृत भाषा के सबसे बड़े वैयाकरण हुए हैं। इनका जन्म तत्कालीन उत्तर पश्चिम भारत के गांधार में हुआ था। इनके व्याकरण का नाम अष्टाध्यायी है, जिनमें आठ अध्याय और लगभग चार सहस्त्र सूत्र हैं। संस्कृत भाषा को व्याकरण सम्मत रुप देने में पाणिनि का योगदान अतुलनीय माना जाता है। अष्टाध्यायी मात्र व्याकरण ग्रंथ नहीं है। इसमें प्रकारांतर से तत्कालीन भारतीय समाज का पूरा चित्र मिलता है। इनका जीवनकाल 520–460 ईसा पूर्व माना जाता है।

एक शताब्दी से भी पहले प्रसिद्ध जर्मन भारतीविद् मैक्समूलर (1823–1900) ने अपने साइस ऑफ थाट में कहा – मैं निर्भीकतापूर्वक कह सकता हूँ कि अंग्रेजी या लैटिन या ग्रीक में ऐसी संकल्पनाएँ नगण्य हैं जिन्हें संस्कृत धातुओं से व्युत्पन्न शब्दों से अभिव्यक्त न किया जा सके। इसके विपरीत मेरा विश्वास है कि 2,50,000 शब्द सम्मिलित माने जाने वाले अंग्रेजी शब्दकोष की सम्पूर्ण सम्पदा के स्पष्टीकरण हेतु वांछित धातुओं की संख्या, उचित सीमाओं में न्यूनीकृत पाणिनीय धातुओं से भी कम है। अंग्रेजी में ऐसा कोई वाक्य नहीं जिसके प्रत्येक शब्द का 800 धातुओं से एवं प्रत्येक विचार का पाणिनि द्वारा प्रदत्त सामग्री के सावधानीपूर्वक विश्लेषण के बाद अविशष्ट 121 मौलिक संकल्पनाओं से सम्बन्ध निकाला न जा सके।

The M.L.D. News letter (A monthly of indological bibliograhpy) in April 1993 में महर्षि पाणिनि को First software man without hardware घोषित किया है। जिसका मुख्य शीर्षक था "Sanskrit for future hardware" जिसमें बताया गया प्राकृतिक भाषाओं को कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग के लिए अनुकूल बनाने के तीन दशक की कोशिश करने के बाद वैज्ञानिकों को एहसास हुई कि कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग में भी हम 2600 साल पहले ही पराजित हो चुके हैं। हालांकि उस समय इस तथ्य किस प्रकार और कहां उपयोग करते थे यह तो नहीं कह सकते, पर आज भी दुनिया भर में कम्प्यूटर वैज्ञानिक मानते हैं कि आधुनिक समय में संस्कृत व्याकरण सभी कम्प्यूटर की समस्याओं को हल करने में सक्षम हैं।

व्याकरण के इस महीन ग्रन्थ में पाणिनि ने विभक्ति प्रधान संस्कृत भाषा के 4000 सूत्र बहुत ही वैज्ञानिक और तर्कसिद्ध ढंग से संग्रहीत हैं। नासा के वैज्ञानिक मि. रिक् ब्रिग्स ने अमेरिका में कृत्रिम बुद्धिमता और पाणिनि व्याकरण के बीच की श्रृंखला खोज की। प्राकृतिक भाषाओं को कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग के लिए अनुकूल बनाना बहुत मुश्किल कार्य थाजब तक कि मि. रिक ब्रिग्स द्वारा संस्कृत के उपयोग की खोज न की गयी।

पाणिनीय व्याकरण की महत्ता पर विद्वानों के विचार – "पाणिनीय व्याकरण मानवीय मस्तिष्क की सबसे बड़ी रचनाओं में से एक है"(लेनिन ग्राड के प्रोफेसर टी. शेरवात्सकी)। "पाणिनीय व्याकरण की शैली अतिशय प्रतिभापूर्ण है और इसके नियम अत्यन्त सतर्कता से बनाये गये हैं (कोल ब्रुक)"। "संसार के व्याकरणों में पाणिनीय व्याकरण सर्वशिरोमणि है, यह मानवीय मस्तिष्क का अत्यन्त महत्वपूर्ण आविष्कार है (सर डब्ल्यू डब्ल्यू. हण्डर)", "पाणिनीय व्याकरण उस मानव मस्तिष्क की प्रतिभा का आश्चर्यतम् नमूना है जिसे किसी दूसरे देश ने आज तक सामने नहीं रखा" (प्रो. मोनियर विलियम्स)

विवेचनात्मक

क्या वृक्षों में आत्मा होती है ?

– डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह

बुद्धिजीवियों के मन में प्रायः प्रश्न आते रहते हैं। उनमें एक प्रश्न यह भी है कि क्या वृक्षों में आत्मा होती है। होती है तो क्या उन्हें काटने चीरने पर दर्द का अनुभव होता है ? क्या वृक्ष भी जीवित होते हैं। इनका जीवन कैसा होता है ? मनुष्य इन प्रश्नों का समाधान, विद्वानों, शास्त्रियों, दार्शनिकों द्वारा ढूंढना चाहता है, विज्ञान में ढूंढना चाहता है, हालांकि वेद, उपनिषद, दर्शन शास्त्रों में आत्मा परमात्मा के स्वरुप व कर्म आदि पर विस्तृत ज्ञान है।

वृक्षों में आत्मा होती है विद्वानों के अपने-अपने विचार हैं, परन्तु दार्शनिक अरस्तु ने माना हैकि वनस्पति अर्थात् वृक्षों में आत्मा होती है परन्तु वह जन्तुओं की आत्मा से भिन्न और कम तर होती है। शास्त्रों में प्रकाश किया है, कि मनुष्य का जन्म उसके द्वारा किया गया अच्छे बुरे कर्मों के अनुसार होता है। अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतंकर्म शुभाशुभय – गीता

अर्थात् मनुष्य को अपने किये अच्छे-बुरे कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ता है। अच्छे कर्मों का अच्छा तथा बुरे कर्मों का बुरा फल मिलता है। इसीलिए कहा गया है अन्धकार से प्रकाश की ओर चलना चाहिए वेदादि सत्य शास्त्रों से ज्ञान प्राप्त कर जीवन में श्रेष्ठता का समावेश करना चाहिए यह जीवन परोपकार हेतु मिला है, सदैव सत्याचरण करना चाहिए।

मनुष्य मन से जिस शुभ व अशुभ कर्म को करता है उसको मन, वाणी से किए को वाणी और शरीर में किए को शरीर से अर्थात् सुख-दुःख को भोगता है। मनु स्मृति में कर्म फल सिद्धान्त पर विस्तृत वर्णन करते हुए बताया है कि जो व्यक्ति घोर पाप जन्य शरीर से करता है वृक्ष का जन्म मिलता है –

शरीर जै कर्म दोषेर्याति स्थावरतां नरः।
वाचिकः पक्षिमृगतां मानसैन्त्य जतिताम् ॥
मनु. स्मृति अ. 12

अर्थात् जो नर शरीर सेचोरी, परस्त्रीगमन, श्रेष्ठों को मारने आदि दुष्ट कर्म करता है उसको वृक्षादि स्थावर का जन्म वाणी से किए पाप कर्मों से पक्षी और मृगादि तथा मन से किए दुष्ट कर्मों से चाण्डाल आदि का शरीर मिलता है।

स्पष्ट है कि शरीर से चोरी परस्त्रीगमन श्रेष्ठों को मारने से वृक्षादि स्थावर का जन्म बताया है अर्थात् वृक्षों में आत्मा की पुष्टि होती है।

स्थावरा कृमिं कीटश्च मत्स्याः सर्पाश्चकच्छपाः।
पशवश्च मृगाश्चैव जघन्या तामसी गति ॥ मनु.

उक्त श्लोक से भी विदित होता है कि वृक्ष स्थावर में आत्मा होती है इसका अर्थ है – अत्यन्त तपोगुणी का जन्म स्थावर कृमि, कीट, मत्स्य, सर्प, कच्छप पशु मृग आदि का होता है।

अर्थात् वृक्ष में जो आत्मा होती है अत्यन्त तामसिक वृत्ति व कर्मों का परिणाम है। अर्थात् मनु स्मृति के अनुसार घोर तामसिक कर्म करने का परिणाम वृक्ष का जन्म है यहां पर स्पष्ट है कि वृक्षों में आत्मा होती है।

वृक्षों को काटने चीरने पर उन्हें दुःख क्यों नहीं होता ? अब उठता है कि जब वृक्ष में आत्मा है तो इन्हें काटने, चीरने पर दुःख क्यों नहीं होता। इसका उत्तर है कि वनस्पति में जन्तुओं मनुष्यों की भांति तंत्रिका तन्त्र का अभाव होता है क्योंकि सुख दुःख का अनुभव तंत्रिका तन्त्र से ही होता है इसलिए वृक्षों को पीड़ा का अनुभव नहीं होता।

जब पांचों इन्द्रियों का पांच विषयों के साथ सम्बन्ध होता है तभी सुख व दुख की प्राप्ति जीव को होती है जैसे बधिर को गली प्रदान, अन्दे को रुप का ज्ञान, आगे से सर्प व्याघ्रादि भयदायक जीवों का चले जाना, शून्य बहिरी वालों को स्पर्श पिन्नस रोग वालों रस और शून्य जिह्वा वाले को रस प्राप्ति नहीं हो

सकता । इसी प्रकार उन जीवों की भी व्यवस्था है ।

स.प्र. द्वादस समुल्लास

नेत्र, कर्ण, त्वचा, जिह्वा, घ्राण यह पांच इन्द्रियां है, जब इनका सम्बन्ध विषयों से होता है, तभी सुख दुख का ज्ञान होता है इन्द्रियों का जब विषयों से संबंध नहीं होता, ज्ञान नहीं होता इस प्रकरण को इस प्रकार समझ व जान सकते हैं ।

जो व्यक्ति अपने मिथ्या, अभिमान आदि दोषों के कारण, जीवित साक्षात उपकारी शरीरधारी वैराग्यवान योग्य गुरुजी को समर्पण नहीं कर सकता, वह आंखों से न दिखने वाले परोक्ष ईश्वर को समर्पण कैसे कर पाएगा?

को पता ही नहीं चल पाता कि उसकी देह में चीर फाड़ की गई है क्योंकि उसकी इन्द्रियां व तन्त्रिका तन्त्र उस समय अचेतन हो जाता है तन्त्रिकायें उस समय अपना कार्य नहीं करती है इन्हीं तन्त्रिकाओं से दुख सुख का अनुभव होता है यही तन्त्रिका व इन्द्रियां वनस्पति में नहीं होती है अर्थात् वृक्षों में पीड़ा का अनुभव ही नहीं हो सकता जब वृक्ष व वनस्पतियों को हम काटते व चीरते हैं उन्हें कोई किसी प्रकार की दुख नहीं होता ।

दर्शनशास्त्र दार्शनिकों के अनुसार जो बात कही गई है उसको आधुनिक विज्ञान के अनुसार भी चिकित्सा व शल्य शास्त्र के अनुसार स्वीार किया है ।

देखों जब मनुष्य का जीव सुषुप्ति दशा में रहता है तब उसकी सुख वा दुःख की प्राप्ति कुछ भी नहीं होती क्योंकि वह शरीर के भीतर तो है परन्तु उसका बाहर के अवयवों के साथ सम्बन्ध न रहने से सुख दुख की प्राप्ति नहीं कर सकता और जैसे वैद्य वा आजकल के डाक्टर लोग नशे की वस्तु खिला वा सुंघा के रोगी पुरुष के शरीर के अवयवों को काटते वा चीरते हैं उसको उस समय कुछ भी दुख विदित नहीं होता वैसे वायु काय अथवा अन्य स्थावर शरीर वाले जीवों सुख दुख कभी प्राप्त नहीं हो सकता । जैसे मूर्छित प्राणी सुख दुख को प्राप्त कभी नहीं हो सकता वैसे वायु कायादि के जीव भी अत्यन्त मूर्छित होने से सुख दुख को प्राप्त नहीं हो सकते फिर इनको पीड़ा से बचाने की सिद्ध कैसे हो सकती है जब उसको सुख दुख की प्राप्ति प्रत्यक्ष नहीं होती तो अनुमानादि कैसे युक्त हो सकते हैं । स.प्र.द्वादश समु.

मनुष्य व जन्तुओं की शल्य क्रिया करने के पूर्व रोगी को दवा सुंघा (क्लोरोफार्म) कर या सूचिका वेध द्वारा बेहोश करके शल्य क्रिया की जाती है । रोगी

चेतना के सम्बन्ध में जन्तु व वनस्पति में यह अन्तर मुख्य है कि जन्तुओं में तंत्रिका तन्त्र होता है जिससे जन्तु सुखदुख व पीड़ा का अनुभव करते हैं वनस्पति में तंत्रिका तन्त्र नहीं होता जिससे उन्हें चीरने पर पीड़ा नहीं होती ।

वृक्षों की जीवन –

भारतीय वैज्ञानिक डॉ. जगदीश चन्द्र बसु ने वनस्पतियों पर अनेक खोजे की उन्होंने पाया कि वृक्षों में जीवन होता है जन्तुों की भांति वृक्षों मेंभी श्वसन, भोजन निर्माण वृद्धि उत्सर्जन रक्षात्मक क्रिया प्रतिक्रिया होती है, प्रजनन होता है ।

डॉ. बसु व वैज्ञानिक वैकस्टर एन ट्रेण्डस ने बताया कि पौधों में संवेदना को ग्रहण करने हेतु संवेदक (रिसेप्टर्स) व अभिग्राहक (सेन्सर्स) होते हैं जिनसे संवेदना का अनुभव यह पौधे करते हैं जैसे छुई मुई तथा अन्य अनेक पौधे नहीं पर्वत मैदानों एवं अमेजन के जंगलों में पाए जाते हैं काशापुरा, मक्खाजाली (ड्रोसेरा), ब्लैडर वर्ट, सुन्दरी का पिंजरा (वीबस लाडट्रैप), घटपर्णी (पिचर प्लाण्ट) आदि अनेक पौधे व वृक्ष पाए जाते हैं । कीटभक्षी, सुगंधी

फैलाने वाले औषधि में उपयोगी व अनेक पौधे जिनसे रोने व हंसने की आवाजें निकलती है यह विशेषताएं संवेदक अभिग्राहक से संबंधित होती है, उनका विन्यास आकार प्रकार आदि इन क्रियाओं प्रतिक्रियाओं में सहायक हो सकता है । इतना निश्चित है कि यह प्रतिक्रियाएं तभी संभव है जब इनमें जीवन है । वृक्ष के सुख जाने पर जीवन समाप्त हो जाता है और जीवन संबंधित लक्षण व क्रियाएं जैसे कि श्वसन उत्सर्जन वृद्धि भोजन निर्माण रक्षा संबंधी प्रतिक्रियाएँ घटित नहीं होती ।

वृक्षमों में आत्मा होती है परन्तु जन्तुओं की आत्मा से भिन्न व कमतर होती है । अरस्तु जो दार्शनिक ते उन्होंने ऐसा बताया महाराजा मनु ने बतायाकि जो अत्यन्त घोर तामसिक वृत्ति की आत्माएँ होती हैं उनकी वृत्ति की जड़वत हो जाती है । कीट कच्य्प व वृक्ष स्थावर में संवेदक अर्थात् सैन्सर द्वारा संवेदना का ग्रहण करते हैं हालांकि वृक्षों में जीवन होता है परन्तु तंत्रिका तन्त्र नहीं होता, जिससे स्थापर को चीरने काटने पर पीड़ा नहीं होती ।

यह ईश्वर की सृष्टि है जिसमें घोर तामसिक वृत्तिकी आत्मा स्थावर वृक्ष वनस्पित के रुप में भी संसार के लिए कितने उपकारी है, मनुष्य व जीव जन्तुओं पक्षियों के लिए जीवन देने वाले हैं, वनस्पति के हरियाली पर्यावरण हेतु बहुत महत्वपूर्ण है धूप, वर्षा सर्दी व आंधी भी खड़े रहकर वृक्ष मनुष्य के लिए उपयोगी है । इसके बिना मानव जीवन असम्भव है हमें वृक्षों को बड़ी संख्या में लगाना इनकी सेवा करना चाहिए । पर्यावरण की रक्षा करें ।

लेखक इस लेख पर अपनी प्रतिक्रियाएं दे सकते हैं ।

पता : खुर्जा (उ.प्र.)

पाप करोगे श्राप लगेगा

चिंतन करना आर्यसमाजियों,आर्यसमाज मे क्यों आये हो।
अब तक आर्य समाज को आर्यों समझ नहीं क्यों पाये हो।।
शपथ पत्र जो भरा था तुमने क्या उस पर चल पाए ?
नियम उपनियम में वर्णित वह सदाचार अपनाये ?
प्रतिज्ञा को विस्मृत कर ,क्यों आर्यसमाजी कहलाये हो।
वचन दिया था जड़ पूजा से कोसो दूर रहेंगे।
मृतक श्राद्ध, स्थान विशेष को तीर्थ नहीं मानेंगे।
खुद से पूछो इस नियम पर क्या खरा उतर पाये हो।।
किसी अवैदिक या पौराणिक नहीं चलेगा विधि विधान।
वेद विरुद्ध आचरण न होगा, वेद हमारा संविधान।
वेदों के पथ पर अब तक तुम, कदम नहीं रख पाये हो।।
जातिवाद और छुआछूत को कभी नहीं अपनाऊंगा।
आर्य समाज के नियम पर चलकर जीवन सफल बनाऊंगा।
सभासदी की मर्यादा पर कभी नहीं चल पाये हो।।
आर्यसमाज तो आर्यसमाज है,ऐसा ना कोई और समाज ।
पाप करोगे श्राप लगेगा, क्योंकि संस्थापक ऋषि राज ।
तिकड़म छल प्रपंच चल रहा समाधान नहीं कर पाए हो।।
वेद विद्या घर घर में पहुंचे यह था लक्ष्य तुम्हारा।
सिद्धांतों की जले होलिका सत्य से लिया किनारा।
केवल धनोपार्जन करने का संकल्प निभा पाये हो।।
दयानंद की बात ना माने यह कैसी नादानी है।
संध्या और स्वाध्याय करे नहीं, तेरी यही कहानी है।
काम बिगाड़े ऋषि का "संजय" आर्य समाज बचाए हो ?।

आचार्य संजय सत्यार्थी, आर्योपदेशक, पटना (बिहार)

पुरानी यादें

कुछ याद आ रहा है
कुछ भूल रहा हूँ
कुछ भूल जाना चाहता हूँ
भूल नहीं पा रहा हूँ
वो बचपन, वो झगड़े वो अलगाव वो वादे
वे टूटे हुए किस्से, वो प्रेम के वादे अधूरे आधे
याद आती है माँ, जो अब रही नही
मन को झरोखा खाली नहीं होता कभी
एक लड़की हंसती हुई हो गई अचानक गुम
तड़फ एक दूजे के लिए लेकिन प्रेम से जरुरी थी
मर्यादा, तड़फ दोनों तरफ, लेकिन थे दोनों चुप
स्मृतियाँ आज याद आती हैं तो खो जाता मन
सब कुछ भूलकर भी रह जाता कुछ याद
आज उम्र के इस मोड़ पर भी लगता है, जैसे
माँ दे रही है आवाज ।

देवेन्द्र कुमार मिश्रा,
पता–राजुल ड्रीम सिटी, अमखेरा रोड, जबलपुर (म.प्र.)

ज्ञानामृत योग्य गुरु को पहचान

"क्या बिना गुरु जी को समर्पित हुए कोई व्यक्ति डॉक्टर, इंजीनियर, पायलट, वकील इत्यादि योग्यताएँ प्राप्त कर सकता है ? बिल्कु नहीं। कोई भी विद्या सीखनी हो, तो उस विद्या के गुरु जी को पूरी तरह से समर्पित होना पड़ता है, तभी व्यक्ति उस विद्या को ठीक प्रकार से सीख पाता है और उस विद्या में कुशल हो सकता है, अन्यथा नहीं। इसी प्रकार से योग विद्या में भी कुशलता प्राप्त करने के लिए किसी योग्य गुरु जी को समर्पण करना होगा, उसके बिना इस क्षेत्र में भी सफलता नहीं मिल पायेगी।"

योगाभ्यास में सफलता प्राप्त करने के लिए पहली बात तो यह है कि "योगाभ्यास सिखाने वाले गुरुजी वैदिक योग को जानते हो। स्वयं उस मार्ग पर चल रहे हों। उन्होंने ईश्वर की अनुभूति की हो, और लंबे समय का उनका योगाभ्यास का अनुभव हो। अर्थात् सब प्रकार की योग्यता उनमें होनी चाहिए, तभी वे अन्य विद्यार्थियों को भी ईश्वर साक्षात्कार तक पहुंचा सकते हैं।"

ऐसी योग्यता वाले गुरजी बहुत कम मिलते हैं। कहीं-कहीं मिलते भी है, तो सीखने वाले विद्यार्थी योगाभ्यासी लोग योग्यता कम होने से उनको पहचान नहीं पाते। "और यदि कोई व्यक्ति पहचानता भी हो, कि इन गुरुजी की योग्यता मुझसे बहुत अधिक है। योग के प्रत्येक क्षेत्र में ये मुझसे बहुत आगे है। इतना पहचानने पर भी वह विद्यार्थी योगाभ्यासी यदि अपने मिथ्या अभिमान आदि दोषों के कारण उन जीवित साक्षात उपकारी शरीरधारी वैराग्यलवान योग्य गुरुजी को समर्पण नहीं करता, तो वह विद्यार्थी योगाभ्यास में उच्च सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।"

"जिस गुरुजी ने उस विद्यार्थी योगाभ्यासी का बहुत सा उपकार भी किया हो और उनके प्रशिक्षण के कारण विद्यार्थी ने कुछ प्रगति भी कर ली हो। परन्तु उस थोड़ी सी प्रगति के कारण उस विद्यार्थी में मिथ्या अभिमान उत्पन्न हो गया हो, जो कि प्रायः उत्पन्न हो ही जाती है। फिर वह अपने मिथ्या अभिमान के कारण अपने योग्य गुरुजी को पूरी तरह से समर्पित नहीं होता, सच्चाई और ईमानदारी से उनके आदेश निर्देश का पालन नहीं करता, छप कपट चालाकी चतुराई करता है, तो ऐसा व्यक्ति, जो साक्षात दिखने वाले उपकारी गुरुजी को समर्पित नहीं हो पाया, वह परोक्ष अर्थात न दिखने वाले परमात्मा को समर्पित कैसे हो पाएगा ? वह ईश्वर को समर्पित कदापि नहीं हो पाएगा। क्योंकि शरारीधारी गुरुजी के निर्देश या अनुशासन में चलना अपेक्षाकृत सरल है। ईश्वर के नियम तो बहुत ही अधिक कठिन हैं। उनका पालन करना तो, गुरुजी के नियमों का पालन करने से भी, बहुत अधिक कठिन है। जब वह सरल कार्य को भी नहीं कर पा रहा, तो कठिन कार्य को कैसे पूरी कर पाएगा ? इसलिए वह ठीक प्रकार से ईश्वर समर्पित नहीं हो पाएगा। और ईश्वर समर्पित हुए बिना उसको योगाभ्यास में पूरी सफलता नहीं मिल पाएगी।" वह जीवन भर इस भ्रांति में रहेगा कि **"मैं तो बिल्कुल ठीक चल रहा हूँ और सच्चे ईश्वर को ठीक प्रकार से समर्पित हूँ। मैं तो बिना गुरुजी के अनुशासन में चले ही, बिना गुरुजी को समर्पण किये ही, केवल अपनी बुद्धि से ही, योग में ऊंची प्रगति कर लूंगा। ईश्वर साक्षात्कार कर लूंगा।"** "इस भ्रांति में ही उसका सारा जीवन चला जाएगा और वह कोई विशेष प्रगति नहीं कर पायेगा।" **अतः योग्य गुरुजी जी की पहचान करें और पहचान हो जाने पर उसको श्रद्धापूर्वक पूर्णतया समर्पण करें। उसके बाद ही आप दिखने वाले परमात्मा को समर्पित हो पाएंगे, और तभी आपका कल्याण होगा, अन्यथा नहीं।**

– **स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक**, दर्शन योग महाविद्यालय रोजड़ गुजरात

अमृतकण

आयुर्वेद सिद्धान्त

– डॉ. रक्षपाल गुप्ता, से.वि. प्राचार्य
आयुर्वेद महाविद्यालय, बिलासपुर

स्वास्थ्य की प्राप्ति कर दीर्घायु को प्राप्त कर सकता है।

– जीवन की स्थिरता के लिए प्राकृतिक सात्विक व सहज प्राप्त अन्न (भोजन) सर्वश्रेष्ठ है।
– शरीर में समत प्रसन्नता दृढ़ता व स्फूर्ति लाने के लिए शारीरिक व्यायाम सर्वश्रेष्ठ उपाय है।
– सब रोगों की एकमात्र निर्विवाद प्रामाणिक, वैज्ञानिक व प्रभावशाली अनुभूत सर्वश्रेष्ठ औषधि प्राण (प्राणायाम) है।
– समय पर सात्विक व संतुलित भोजन करना आरोग्य का सबसे बड़ा मंत्र है।
– वर्जनीय (दूर से त्याज्य) जनों में नास्तिक अर्थात् आत्मा–परमात्मा, कर्मफल एवं पुनर्जन्म में विश्वास न करने वाला व्यक्ति प्रथम स्थान पर आता है।
– व्याधिविनाश के लिए लंघन (उपवास) सर्वश्रेष्ठ है – लंघन परमौषधम्।
– पाचन शक्ति के अनुसार भोजन करने से जठराग्नि की वृद्धि होती है।
– आवश्यकता से अधिक भोजन करने से अजीर्ण उत्पन्न होता है तथा स्वास्थ्य की हानि होती है।
– समय पर भोजन करने से स्वास्थ्य का रक्षण तथा बल की वृद्धि होती है।
– अनियमित भोजन करने से पाचन शक्ति में अनियमितता उत्पन्न होती है तथा स्वास्थ्य की हानि होती है।
– उपवास (सप्ताह में एक बार) करने से शरीर के आमदोष आदि विषैले तत्वों का शमन होता है।
– लम्बे समय तक उपवास रखने से स्वास्थ्य की क्षति होती है।
– भोजन से तुरन्त पहले व तुरन्त बाद में जल पीने से जठराग्नि मंद होती है।
– अधिक मात्रा में ठण्डे पेय पदार्थ पीने से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होती है तथा कफ अधिक मात्रा में बनता है।
– तांबे के पात्र में रखे जल का सेवन करने से यकृत व प्लीहा के लिए लाभप्रद होता है।
– ताजी हवा व स्वस्थ वातावरण थकान को दूर कर शरीर में ताजगी व स्फूर्ति उत्पन्न करता है।
– दिन में भोजन के बाद सोने से कफ की वृद्धि होती तथा मोटापा बढ़ता है।
– बिस्तर पर लेट कर पढ़ना आंखों के लिए हानिकारक होता है।
– मूत्र व पुरीष के वेग को रोकने से आध्मान तथा उदावर्त आदि विकारों की उत्पत्ति होती है।
– ज्यादा बोलने से शारीरिक शक्ति का ह्रास तथा वात की वृद्धि होती है।
– क्षमता से अधिक कार्य करने से शरीर को हानि पहुंचती है।
– ब्रह्मचर्य का पालन करने से आयु तथा शारीरिक शक्ति की वृद्धि होती है।
– मानसिक शांति व प्रसन्नता व्याधि रहित जीवन के लिए सुरिक्षित है।
– तनाव व चिन्ता बीमारियों को उत्पन्न करती है तथा हृदय को कमजोर बनाती है।

सुखी जीवन के लिए अच्छे घर का होना जरुरी नहीं, घर का माहौल अच्छा होना जरुरी है.

गौरवात्मक

विरासत का सम्मान - योग दिवस

– **स्वामी अशोकानन्द,** बाल आश्रम, अम्बिकापुर

योग शब्द का अर्थ जुड़ना, जबकि अधिकतर लोग इस शब्द को सुनते ही आसन की परिकल्पना कर इस शब्द के व्यापक अर्थ को सीमित कर देते हैं अपने हाथ–पैर को मोड़कर जो हम विभिन्न मुद्राएँ अपने शरीर को बलिष्ठ बनाने के लिए बनाते हैं, यह योग नहीं है, यह तो केवल योग का एक अंग आसन है, जो योग आठ अंगों में एक है, जैसे किसी शरीर के एक अंग को ज्ञान लेने से हम शरीर की कल्पना नहीं कर सकते उसी प्रकार योग के आठों अंगों के बिना न तो हम योग को जान सकते और न योग के परम उद्देश्य को प्राप्त कर सकते हैं ।

योग वह विद्या है जो हमें परमात्मा से जोड़ती है आइए जानते हैं कैसे ?

महर्षि पतंजलि द्वारा प्रतिपादित योग दर्शन का प्रारम्भ "अथ योगानुशासनम्" वाक्य से किया गया है जिसका अर्थ है अब योग का अनुसासन मन में यह प्रश्न स्वाभाविक रुप से उठता है कि महर्षि ने 'अथ योग का अनुशासन' वाक्य से योग दर्शन का प्रारम्भ क्यों किया ? वैसे तो भारतीय धर्म ग्रन्थों को प्रारंभ करने की परम्परा अथ और अंत इत शब्द से होना पाई जाती है किन्तु यहां इस शब्द के प्रयोग के पीछे कुछ विशेष प्रयोजन दिखता है, निश्चित ही योग की अनुशासित विद्या को जानने से पहले भी कुछ और जानने की आवश्यकता है । वह क्या है ?

वेदों को प्रमाण मानने वाले छः भारतीय दर्शनों में सांख्य और योग दर्शन का युग्म है ।सांख्या और योग दर्शन को हम साथ पढ़ते हैं । योग दर्शन को समझने से पूर्व सांख्य दर्शन की समझ आवश्यक है, क्योंकि सांख्य दर्शन सृष्टि की उत्पत्ति के कारणों से लेकर उसके तिरोभाव अर्थात विनाश तक वृहद प्रकाश डालती है । मनुष्य जब तक विभिन्न योनियों में अपने बार–बार जन्म और मृत्यु के कारण को नहीं जान लेता, उसे जन्म–मृत्यु के बन्धन से मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती । प्राणी के लिए जन्म–मृत्यु के बन्धन से मुक्ति आवश्यक है क्योंकि जन्म लेते ही वह तीन प्रकार के दुखों से घिर जाता है। ईश्वर कृष्ण द्वारा प्रतिपादित सांख्य दर्शन की प्रथम कारिका कहती है **"दुःखत्रयाऽभिघाताज्जिज्ञासा तदाभिघातके हेतो । दुष्टे सापार्थाचेन्नेकांतान्ततोऽभावात ॥"** अर्थात तीन प्रकार के दुःख से (प्राणी) पीड़ित रहते हैं अतः उसके विनाशक कारण को जानने की इच्छा करनी चाहिए । भारतीय दर्शन पूरी तरह से यह विश्वास करता है कि दुःखों की आत्यंतिक निवृत्तिहीमोक्ष है ।

आधिदैविक, आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक इन तीनों दुःखों से निवृत्ति तभी संभव है जब जीव परम ज्ञान को अपने बोध को जागृत कर लें । सांख्य और योग दर्शन का युग्म उस परम ज्ञान को प्राप्त करने का अवसर प्रदान करता है । सांख्य उस परम ज्ञान को प्राप्त करने के सैद्धान्तिक पक्ष पर प्रकाश डालता है, तो योग उस सैद्धान्तिक पक्ष को व्यवहार में उतारने की प्रेरणा के साथ उपाय भी प्रस्तुत करता है ।

आधुनिक जीवन शैली ने मनुष्य को तनाव कुंठा के साथ अनेक असाध्य रोग उपहार में दिये हैं, बदलते सामाजिक और आर्थिक परिवेश, भू–राजनैतिक समीकरण, मंदी और बेरोजगारी ने मनुष्य के सामान्य जीवन को अत्यंत कठिन बना दिया है, ऐसे में यदि हम विभिन्न प्रकार के तापों अर्थात् कष्टों के बीज अपने आप को मानसिक रुप से संतुलित और शरीर को निरोगी रख सकें तो वर्तमान परिस्थितियों में हमारे जीवन की यह सबसे बड़ी उपलब्धि होगी । शारीरिक स्वास्थ्य के लिए आसन और मानसिक स्वस्थ के लिए प्राणायाम रामबाण औषधि है । अष्टांग योग में इनका तीसरा और चौथ स्थान है ।

प्रथम स्थान पर यम अर्थात् जीवन को अनुशासित करने का विज्ञान जो ऐसे संस्कारों को जन्म देता है जो नैतिक मूल्यों के साथ दूसरों के प्रति सम्मान का भाव पैदा कर जीवन जीने की कला से आभूषित होता है । इनी संख्या पांच है – सत्य, अहिंसा, आस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य ।

दूसरा सोपान है नियम सृष्टि के मूल नियम है, यह एक आयाम है, वैसे ही जैसे – समय इस सृष्टि का आयाम है काल गणना इस आयाम के कारण संभव हो सका । नियम के बिना सृष्टि संभव ही नहीं है विभिन्न आकाशीय पिण्डो के बीच का आकर्षण – प्रतिकर्षण कितना हो यह कहाँ से तय होता है ? बिना टकराएं अरबों की संख्या में आकाश में तैरते ये पिण्ड आपस में टकराते क्यों नहीं है ? जब प्रकृति में प्रत्येक स्थूल और सूक्ष्म वस्तु नियमों से बंधी है तो हम मनुष्यों का जीवन क्यों नहीं ? बिना आत्म नियंत्रण के जीवन भटकाव की ओर ले जाएगा जहां पश्चाताप, अवसाद, रोग, क्लेश के सिवा कुछ भी हाथ नहीं लगता । योग दर्शन में पांच नियम हैं इन पर चल कर ही मनुष्य अपनी अगली यात्रा तय कर सकता है ये पांच नियम है – शौच, शुचिता, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणिधान ।

तीसरा सोपान आसन और चौथे सोपान प्राणायाम की चर्चा हमने ऊपर की है । प्राणायाम में तीन क्रियाओं का समावेश रहता है – पूरक, कुंभक और रेचन । पांचवा सोपान है प्रत्याहार, प्रतत्याहार प्रति और आहार शब्दों के मेल से बना है जिसका अर्थ है विपरीत आहार, इंद्रियों का आहार वाह्य जगत हैं जब इंद्रियों को वाह्य जगत से मोड़कर अर्थात् संसार से हटाकर मनुष्य अपने भीतर की यात्रा में उसे लगाता है तब उसे आत्मबोध का रास्ता मिलता है बिना आत्मबोध के मनुष्य अपने जीवन के परम उद्देश्य को प्राप्त करने में असफल रहता है ।

छठा सोपान है धारणा, प्रत्याहार के पश्चात् मनुष्य अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण प्राप्त कर एकाग्रचित हो जाता है अब उसके जीवन में भटकाव समाप्त हो जाता है । प्रातः जगने से लेकर रात्रि सोने तक उसके समस्त कार्य में जागरुकता रहने लगती है । वह अब एक सजग जीवन जीने का अभ्यस्त हो जाता है ।

अष्टांग योग का सांतवा सोपान है ध्यान अभी तक बताए गए योग के छह अंग केवल तैयारी थे इस सातवें सोपान को प्राप्त की । सातवें सोपान पर पहुंचने के पश्चात् आत्मबोध के साथ जीव, जगत, आत्मा, परमात्मा, इस परिवर्तशील जगत में क्या स्थायी है ? क्या अस्थाई है ? इन सब बातों का आध्यात्मिक ज्ञान स्वतः ही होने लगता है उसके जीवन में परमानन्द अवतरित होने लगता है । अष्टांग योग का अंतिम सोपान है समाधि जिसमें साधक का साक्षात्कार परमात्मा से होने लगता है । वह अपने जीवन के अंतिम उद्देश्य को प्राप्त कर मोक्ष की ओर अग्रसर हो जाता है अब उसके जीवन से ये समस्त कामनाएं समाप्त हो जाती है जो पुनर्जन्म का कारण बनती है और यहां उसके दुखों से आत्यंतिक निवृत्ति हो जाती है ।

योग दर्शन हमें जीवन जीने की कला ही नहीं सिखाता अपितु जीवन के पार देखने की अद्भुत और अकल्पनीय क्षमता विकसित कराता है जो प्रत्येक मनुष्य के जीवन का अंतिम उद्देश्य है । योग की उपयोगिता तो हजारों वर्षों से सिद्ध है लेकिन योग को आसन

और प्राणायाम तक सीमित न रखकर सम्पूर्ण योग दर्शन की उपयोगिता की व्यापक समझ को आत्मसात करना हमारे लिए अत्यंत आवश्यक है, तभी इन विपरीत परिस्थितियों में हमारा जीवन आनन्दमय बन सकेगा। भार सदियों से सुख, शांति, प्रेम, भाईचारे का संदेश पूरे भाईचारे का संदेश पूरे विश्व को देता रहा है अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस भारतीय दर्शन को विश्व पटल पर प्रस्तुत करने का स्वर्णिम अवसर है।

ईश्वर कौन और परिचय

लेखक : स्वामी शान्तानन्द आचार्य, दर्शन योग विद्यालय, सुन्दरपुर, रोहतक, हरयाणा

यह सृष्टि अपने आप में ईश्वर-परिचय है। सूर्य, चांद, पृथ्वी, लोक-लोकान्तर और इनका संचालन किसी शक्ति का परिचय दे रहा है। जगत का सत्ता में आना ही अपने आप में ईश्वर-परिचय है। उसकी महिमा है। उसकी महिमा के सम्मुख जगत की हर सत्ता तुच्छ है। पर 'पर' है, 'परम' है सर्वोत्कृष्ट है, इसीलिए परमात्मा, पमेश्वर, परमदेव आदि नामों से स्मरण किया जाता है। वह इन्द्र है, उसके बल, विस्तार और यश का वर्णन नहीं हो सकता। कोई भी सांसारिक वस्तु उसका उपमान नहीं बन सकती। वह बेमिसाल है। ईश्वर वज्रधर है, पापी आत्माओं को दंड देने वाला है। जड़-चेतन सबका आश्रयदाता है।

वैदिक संस्कृति के अनुसार ईश्वर निराकार, अजन्मा, अगोचर, अमर, अनंत, निर्विकार, सीमा से परे है। यह जगत जो दृश्यमान है, वह केवल उसका एक चरण है। शेष तीन चरण तो पहुंच से, शायद कल्पना से भी परे हैं। पौराणिक विचारधारा के अनुसार व अपनी-अपनी कल्पना के अनुसार ईश्वर को कितने रुप दे दिये गए हैं और दिये जा रहे हैं। वे उसे एक मूर्ति में बाँधकर रख देना चाहते हैं। वे सत्य से दूर भागते हैं। ईश्वर बंधन रहित है। सर्वत्र एवं सर्वव्यापक है। वह एकदेशीय नहीं है। वह कण-कण में विद्यमान है। वह उस काल्पनिक मूर्ति में भी है, परन्तु उसकी सारी शक्तियों तथा गुणों से परिपूर्ण नहीं। उसकी चेतन-शक्ति, उसका आनन्द-रस मूर्ति में विद्यमान नहीं। वह सब तो उसकी अपनी बनाई हुई मूर्तियों में है। आनन्द-रस तो वह स्वयं ही है। हर आत्मा को उसके उस आनन्द रस की तलाश है।

ईश्वर ही हमारा मनभाव है। क्योंकि वही चेतन शक्ति है, ज्ञान स्वरुप है, प्रकाशमय है, ज्योतिपुञ्ज है। उसी के प्रकाश से यह जगत् प्रकाशमय है। हर कार्यशक्ति उसी की शक्ति से प्रेरित और गतिशील है। वह तो हमारी सत्ता है। उसका नियंत्रण हट जाए तो वह जीवन निराधार होकर ढह जाएगा, क्योंकि वह ही सारे जगत् का आधार है। ईश्वर 'सत्यपति' है। विलक्षण रक्षक है। वह विश्व की रक्षा अकेला ही करता है। उसे इस कार्य के लिए किसी से सहायता की आवश्यकता नहीं। वह सर्वशक्तिमान एवं भयहीन है। प्रभु-अग्नि है। अग्नि-स्वरुप है। बाह्य जगत् में आदित्य रुप में प्रकाश प्रदान करता है। सबके हृदय अंतरिक्ष में भी प्रकाश उत्पन्न करता है। मार्ग-दर्शन करता है। वह जातवेदाः है। सब कुछ जानता है, क्योंकि वह सर्वज्ञ एवं सर्वव्यापक है।

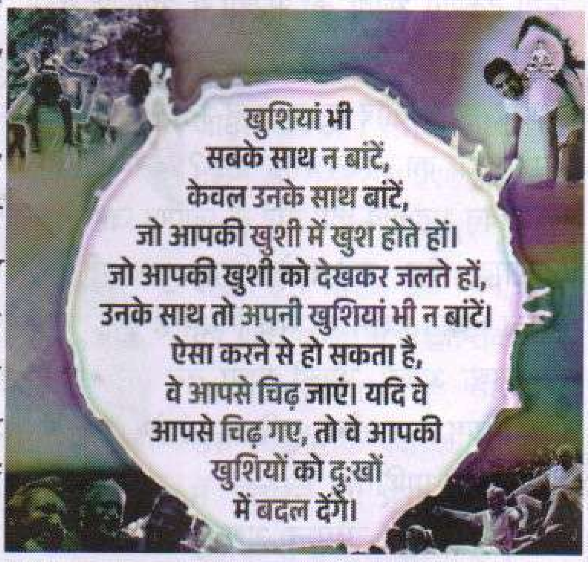

विश्लेषणात्मक सर्वोत्तम धर्मग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश

– स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती

परमात्मा ने इस सृष्टि और मनुष्य आदि प्राणियों को बनाया है। परमात्मा, जीवात्मा और प्रकृचि या अखिल विश्व में स्वतन्त्र अस्तित्व है । यह तीनों सतायें मौलिक, अनादि, नित्य, अनुत्पन्न, अविनाशी गुणों वाली है । परमात्मा ने यह सृष्टि जीवों के कर्मों के सुख व दुख रुपी फल प्रदान करने के लिये बनाई है । मनुष्य योनि वह योनि है जिसमें वह जीवात्मा उत्पन्न किये गये हैं जिन्होंने पूर्व जन्मों में आधे अधिक शुभ व पुण्य कर्म किये हों । जिसके शुभ, पुण्य या अच्छे कर्मों का प्रतिशत 50 से जितना अधिक होता है, उन्हें इस मनुष्य जीवन में उतने ही अधिक सुख, ज्ञान व साधन आदि प्राप्त होते हैं । अन्य जीवात्माओं, जिनके अशुभ कर्मों का अनुपात शुभ कर्मों से अधिक होता है, उन्हें मनुष्येत्तर नीच योनियाँ प्राप्त होती हैं, जहां वह दुखों से मुक्त के लिये मनुष्यों की तरह सन्ध्योपासना, यज्ञ, परोपकार, दान आदि शुभ नहीं कर सकते । मनुष्य का जीवन मिल जाने पर इसे समाजोपयोगी व देशोपयोगी बनाने के लिये ज्ञान प्राप्ति तथा ज्ञानानुरुप पुरुषार्थमय जीवन व्यतीत करने की आवश्यकता होती है । ज्ञान की प्राप्ति मनुष्यों को अपने माता–पिता, आचार्यों, पुस्तकों का अध्ययन, वेद एवं ऋषियों के ग्रन्थों के स्वाध्याय के द्वारा होती है ।

वर्तमान में देश देशान्तर में सत्य विद्याओं के ग्रन्थों की उपलब्धि न होने और भोले भाले मनुष्यों के अविद्यायुक्त मिथ्या मतों व उनके ग्रन्थों सत्यासत्य मिश्रित बातों में फंसे होने से सत्य ग्रन्थों के अध्ययन की अतीव आवश्यकता है । सत्य ग्रन्थों की परीक्षा करने के बाद पूर्ण प्रमाणिक ग्रन्थ ईश्वर से प्राप्त वेद ज्ञान की चार संहितायें सिद्ध होती है । चार वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद है । वेद ज्ञान की इन संहिताओं समस्त ईश्वर प्रदत्त ज्ञान सम्मिलित है । सृष्टि की आदि में परमात्मा ने चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा के माध्यम से अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न सभी मनुष्यों को यही वेद ज्ञान प्रदान किया था । इससे वेदाध्ययन की परम्परा आरम्भ होकर ऋषि जैमिनि, ऋषि दयानन्द और उनके अनुयायियों तक चली आई है । वेदों को समझाने व इनका सरलीकरण करने के लिये समय–समय पर अनेक ऋषियों ने व्याकरण ग्रन्थों सहित अनेक विषयों के शास्त्र ग्रन्थों का प्रणयन किया । वर्तमान में दर्शन, उपनिषदादि ग्रन्थ पर विद्या के प्रमुख ग्रन्थों में आते हैं । इसके अतिरिक्त व्याकरण सहित आयुर्वेद, ज्योतिष, कल्प व शिल्प आदि अपरा विद्याओं के ग्रन्थों का अध्ययन कर मनुष्य अपने जीवन को दुखों से मुक्त कर मरणोपरान्त जन्म मरण के चक्र से मुक्ति प्राप्त कर ईश्वर के सान्निध्य से उसके परमानन्द को भोग सकते हैं।

जन्म मरण से मुक्त सहित ईश्वर के परमानन्द की प्राप्ति के लिये मनुष्यों को सत्य व धर्म का आचरण करना होता है । इसके ज्ञान के लिये वेदों के बाद सबसे अधिक ज्ञानयुक्त ग्रन्थ "सत्यार्थप्रकाश" है । मनुष्य जीवन के लिये उपयोगी सभी विषयों व उनके सत्य अर्थों का विधान इस ग्रन्थ से प्राप्त होता है । इस ग्रन्थ के समान महत्वपूर्ण व उपयोगी अन्य कोई ग्रन्थ संसार में नहीं है । इस

ग्रन्थ से मनुष्यों के कर्त्तव्यों के ज्ञान सहित उनके आचरण की प्रेरणा प्राप्त होती है। अकर्त्तव्यों व अशुभ कर्मों से होने वाली हानियों के ज्ञान के साथ उनसे दूर रहने की प्रेरणा भी यह ग्रन्थ सत्यार्थप्रकश करता है।

यदि यह ग्रन्थ देश के सभी मनुष्यों तक पहुंच जाये और स्कूलों के द्वारा इसका अध्ययन कराया जायें तो मनुष्य अविद्याओं व मिथ्याचरणों में विचरण करने और अपनी आध्यात्मिक एवं शारीरिक हानि होने से बच सकता है। इसके प्रचार से मिथ्या मत-मतान्तरों का हानिकारक प्रभाव भी दूर हो सकता है और समस्त विश्व के सभी मनुष्य सत्य ज्ञान के अनुसरण कर अपना व दूसरों का उपकार कर श्रेय मार्ग के पथिक बन कर ईश्वर की कृपा के पात्र बन सकते है। इस उद्देश्य की पूर्ति सहित संसार से अविद्या का नाश और विद्या का प्रसार करने के लिये सच्चे ईश्वर भक्त ऋषि दयानन्द ने इस ग्रन्थ का प्रणयन किया है। यह ग्रन्थ ज्ञान का सूर्य है जबकि इसके सम्मुख सभी मत-मतान्तरों की पुस्तकें अज्ञान के तिमिर से युक्त हैं। यही कारण है कि अनेक प्रमुख बातों के विद्वानों ने इसका अध्ययन करने व इसको समझने के बाद सत्य वैदिक मत का अनुयायी बन कर इसके प्रचार व प्रसार को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया।

सत्ता बहुत ख़तरनाक है।
चाहे वो सरकारी हो, संस्थागत अथवा संगठनात्मक हो मनुष्य को अंधा बना देती हैं।
सत्ता दुष्टतम लोगों को आकर्षित करती है और श्रेष्ठतम लोगों को भ्रष्ट करतीं हैं।

यज्ञ के तीन अंग और स्वाहा सर्वांग

यज्ञ में स्वाहा क्या है ? स्वाहा ही यज्ञ का सब कुछ है। जैसे मनुष्य तन, मन और आत्मा के मेल से ही मनुष्य बनता है और कार्य-व्यवहार कर सकता है इन तीनों में से एक भी न हो। अथवा निर्बल हो तो कार्य सफल नहीं हो सकता, ऐसे ही "सत्य" यज्ञ की आत्मा है, "यश" यज्ञ का मन है और "श्री" यज्ञ का तन है। "स्वाहा" का अर्थ भी यही है।

(1) "सु"= ठीक भद्र, सत्य, "आहा"= बोलना, कहना। अर्थात् सत्य बोलना। (2) "स्व"=आपा, "हा"= त्याग करना। मनुष्य का यश तब होता है जब वह आपापन=स्वत्व का किसी देश, जाति, समाज, धर्म अथवा प्रभु के लिए अर्पण करता है। (3) "स्व" =स्वत्व=मिलकियत, सम्पत्ति, "हा"= त्याग से प्राप्ति अर्थात् सम्पत्ति या श्री लक्ष्मी या श्री लक्ष्मी से किसी दूसरे का आश्रय बनता है।

अग्निहोत्र (यज्ञ) में मनुष्य मन्त्र के साथ "ओम" पहले कहता है। इसका अर्थ है कि वह यह कार्य परमात्मा की साक्षा में कर रहा है जिसकी पुष्टि वह स्वाहा से करता है।

(वीतराम महात्मा प्रभु आश्रित जी)

समाजिक नियमों का पालन करें या मनमर्जी से जिये ?
सामाजिक कार्यों में सामाजिक नियमों का पालन अनिवार्य है, व्यक्तिगत कार्यों में आप स्वतन्त्र है।

: त्रै-वार्षिक साधारण सभा एवं निर्वाचन अधिसूचना :-

प्रति,

आदरणीय समस्त सम्मानित स्वीकृत प्रतिनिधिगण,

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा

श्रीमन्नमस्ते,

सभा नियमावली कंडिका 12.1 एवं 25.3 तथा विशेष नैमेत्तिक अंतरंग सभा बैठक दिनांक 20-6-2025 टाटीबन्ध रायपुर में लिये निर्णयानुसार सभा का आगामी **त्रै-वार्षिक साधारण सभा एवं निर्वाचन दिनांक 20-7-2025, दिन-रविवार** को भोजन उपरांत दोपहर 1.00 बजे से **स्थान- अग्रोहा भवन, गौरीशंकर मंदिर के पास, रायगढ़ (छ.ग.)** में आयोजित की जा रही है।

अतः सभी मान्य प्रतिनिधियों से निवेदन है कि त्रै-वार्षिक साधारण सभा बैठक में निर्धारित समय व स्थान पर अनिवार्य रुप से उपस्थित होर महत्वपूर्ण विचारणीय विषयों पर चर्चा कर निर्णय लेने एवं सभा के विधिवत निर्वाचन में सहयोग प्रदान करेंगे। गणपूर्ति के अभाव में सभा को 1 घंटे के लिये स्थगित कर दिया जायेगा। 1 घंटे पश्चात् स्थगित अधिवेशन प्रारंभ होगा। इस अधिवेशन में गणपूर्ति की आवश्यकता नहीं होगी। स्थगित अधिवेशन में केवल उन्हीं विषयों पर विचार हो सकेगा, जो पूर्व में विज्ञापित किये गये हों।

विचारणीय विषय :-

1. ईश प्रार्थना।
2. शोक प्रस्ताव।
3. विगत साधारण सभा बैठक दिनांक 28-7-2024 के कार्यवाही की सम्पुष्टि।
4. त्रै-वार्षिक प्रतिवेदन 2024-25 का प्रस्तुतीकरण।
5. वर्ष 2023-24 का अंकेक्षित आय-व्यय लेखा एवं बैलेंस सीट का अवलोकन।
6. वर्ष 2025-26 के अनुमानित बजट का अनुमोदन।
7. आगामी वर्ष के लिए लेखा परीक्षक की नियुक्ति पर चर्चा एवं निर्णय।
8. अंतरंग सभा के निर्णय के विरुद्ध प्राप्त हुए अपील पर चर्चा एवं निर्णय।
9. सभा प्रधान जी द्वारा अध्यक्षीय उद्बोधन।
10. अन्य विषय अध्यक्ष की अनुमति से।
11. सभा के वर्ष 2025-2027 हेतु त्रै-वार्षिक निर्वाचन।

भवदीय

(अवनीभूषण पुरंग)

मंत्री

प्रति प्रेषित सूचनार्थ एवं वास्ते जानकारी :

1. समस्त स्वीकृत प्रतिनिधिगण।
2. समस्त सम्बद्ध आर्यसमाजें।
3. पंजीयन, फर्म्स एवं संस्थायें, छ.ग., ब्लॉक-एक, इंद्रावती भवन, अटल नगर, रायपुर
4. प्रेस।
5. सूचना फलक।

आर्य समाज स्थापना के 150 वर्ष पूर्ण होने पर भव्य समारोह आयोजित

» छत्तीसगढ़ आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डॉ. राम कुमार पटेल ने किया प्रतिनिधित्व, दयानंद सरस्वती जी के वंशजों से हुई सौजन्य भेंट

संस्कृत को प्रोत्साहित करें: भागवत

संबोधन

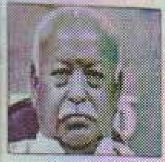

■ कहा-भारतीय संस्कृति रूढ़िवादी नहीं, इसमें समय के साथ बदलाव

साबरकांठा, एजेंसी। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत ने रविवार को कहा कि भारत को विश्व गुरु बनने के लिए वेदों के ज्ञान और प्राचीन संस्कृत भाषा को प्रोत्साहित करने की जरूरत है। उन्होंने कहा कि भारतीय संस्कृति रूढ़िवादी नहीं है बल्कि इसमें समय के साथ बदलाव हुआ।

भागवत ने मुदेटी गांव में श्री भगवान याज्ञवल्क्य वेदतत्वज्ञान योगाश्रम ट्रस्ट की ओर से आयोजित वेद संस्कृत ज्ञान गौरव समारोह कार्यक्रम में कहा कि भारत का निर्माण वेदों के मूल्यों के आधार पर हुआ, जिनका पीढ़ी दर पीढ़ी पालन किया जाता रहा। संघ प्रमुख ने कहा कि आज के भारत को विकास मार्ग पर आगे बढ़ना है, लेकिन अमेरिका, चीन और रूस की तरह महाशक्ति नहीं बनना। हमें एक ऐसा देश बनाना है, जो आज दुनिया को परेशान करने वाली समस्याओं का जवाब दे सके और अपने सही आचरण से दुनिया को शांति, प्रेम और समृद्धि का रास्ता दिखा सके।

उन्होंने कहा कि भारत एक ऐसा देश है जो धर्म का प्रचार करने, सभी को एकजुट करने और विश्व गुरु बनने में विश्वास करता है। जीत का मतलब धर्म की विजय है। भागवत ने दावा किया कि वेदों या वेद विज्ञान और संस्कृति के ज्ञान का पोषण करना आवश्यक है। यह सारा ज्ञान संस्कृत में है इसलिए संस्कृत का प्रभाव होना आवश्यक है।

महाशक्तियों को भी स्पष्ट बात कहता है भारत

यूक्रेन और रूस के बीच युद्ध में भारत के रुख की तारीफ करते हुए संघ प्रमुख ने कहा कि दोनों देश भारत को अपने पक्ष में करना चाहते हैं, लेकिन भारत का कहना है कि आप दोनों हमारे मित्र हैं और इसलिए हम किसी एक का पक्ष नहीं लेंगे। भारत अपने रुख पर कायम रहा कि यह युग युद्ध का युग नहीं है, इसलिए इसे रोकना जरूरी है। आज के भारत के पास दुनिया की महाशक्तियों से यह कहने की ताकत है, जिसकी अतीत में कमी थी।

सुर्खियाँ

सात वर्ष और छह माह का होगा बीएएमएस प्री कोर्स

संस्कृत के छात्र भी बन सकेंगे आयुर्वेद डॉक्टर

'आयुर्वेद गुरुकुलम' होंगे स्थापित

मौजूदा संस्थानों को नहीं मिलेगा मौका

सुविधाएं करनी होंगी स्थापित

अभिनय करके सिखाया संस्कृत

संस्कृत संभाषण शिविर

दुर्ग। ओम परिसर में चल रहे संस्कृत संभाषण शिविर के आठवें दिन डॉ. जैनेंद्र दीवान, डॉ अजय आर्य एवं ईश्वरी देवांगन ने प्रशिक्षण प्रदान किया। डॉ. जैनेंद्र दीवान ने प्रतिभागियों को अभिनय करके क्रिया एवं विलोम शब्दों का प्रयोग सिखाए। संस्कृत पढ़ने वाले सभी छात्र एवं अभ्यासी प्रशिक्षण देने वालों के साथ संस्कृत में बात कर रहे हैं। सूचनाओं का आदान-प्रदान। स्वीकृति और अस्वीकृति के लिए संस्कृत के ही शब्दों और वाक्य का प्रयोग किया जा रहा है। डॉ. अजय आर्य ने धारा प्रवाह प्रतिभागियों को संस्कृत में कहानी सुनाई। डॉ. अजय आर्य ने कहा कि यह कहानी हमसे कहती है कि हम जैसी संगति में रहते हैं हमारा सोच विचार और व्यवहार इस तरह से परिवर्तित हो जाता है। इसलिए हम सभी को अपनी संगति का चयन करते समय सावधानी बरतनी चाहिए।

आरोग्य मधुमेह (डायबिटीस) से कैसे बचें ?

– आचार्य डॉ. वेदव्रत आर्य

कई बार देखा जाता है कि त्वचा में छोटी सी फुंसी या खुजली उत्पन्न होकर लंबे समय तक बनी रहती है जो कि सामान्य घरेलू नुस्खों से लेकर Highest level allopathic drugs prescribed by highest doctor तक प्रयोग करने के पश्चात् भी रोग का निवारण तो होता नहीं बल्कि समस्या निरन्तर बढ़ते हुए असाध्यावस्था की स्थिति में पहुंच जाती है। त्वचा रोग की एसी अवस्था प्रायः त्वचारोग के साथ मधुमेह की उपस्थिति के कारण होती है। कई बार मधुमेह के आधुनिक निदान परीक्षण में सब सामान्य होने पर भी पूर्वोक्त अवस्था होती है, ऐसी स्थिति में मधुमेह के पूर्व रुप की ओर ध्यान देना चाहिए चूंकि एक बार मधुमेह हो जाने के बाद इसका पूर्णतः (चिकित्सत) होना सम्भव भी नहीं, यदि मधुमेह की प्राप्ति होने से पूर्व ही पूर्व रुप के ज्ञान हो जाए और पूर्वरुप की सम्यक रीति से विधिवत गंभीरतापूर्वक चिकित्सा कर ली जाए तो 80% स्थिति में मधुमेह से बचा जा सकता है। मधुमेह से पूर्व 19 प्रकार के प्रमेह में से कोई एक या एक से अधिक प्रमेह की स्थिति का सामना करना पड़ता है इसके पश्चात् बीसवीं स्थिति मधुमेह की होती है। प्रमेह का सम्यक निदान आधुनिक निदानपद्धति में संभव नहीं है, अतः आयुर्वेदीय निदान का सहारा लेना चाहिए।

आधुनिक निदान पद्धति से मधुमेह का निदान तो आसानी से हो जाती है परन्तु प्रमेह के कुछ एक रुपों–प्रकारों का संदेहात्मक निदान से चिकित्सक का मन नैदानिक संदेह से घिरा रहता है अतः प्रमेह के निदान करने का अभ्यास अच्छी तरह से करना आवश्यक है।

"पापी जहाँ भी हैं जिस मत में है वे सब दुःख पायेंगे और धर्मात्मा सज्जन जहाँ भी हैं जिस मत में भी हैं सब सुख पायेंगे। सुख व दुःख की कसौटी कर्म हैं।"

(सत्यार्थप्रकाश चतुर्दश-समुल्लासः)

- Swami Dayananda Saraswati

कफज प्रमेह :– मधुमेह के त्रिदोष सिद्धान्त के आधार पर कफ के दस गुण होते हैं : **"श्वेतशीतमूर्तिपिच्छिलाच्छस्निग्धागुरुमधुरसान्द्र प्रसादमन्दैः, तत्र येन गुणेनैकेनानेकेन वा भूयस्तरमुपसृज्यते।" (चरक नि. 4/9)**

कफ और मेद से मिला हुआ (क्योंकि कफ और पित्त का आश्रय मेद धातु है) शरीर का क्लेद (शरीर का जल धातु) विषमता को प्राप्त होकर मुत्राशय में पहुंच कर मूत्रत्व को प्राप्त होकर अर्थात् मूत्र बनकर कफ पूर्वोक्त दस गुणों से युक्त होकर दस प्रकार के कफज प्रमेह के रुप में प्रकट होते हैं : (1) उदकमेह (2) इक्षुवालिकारसमेह (इक्षु प्रमेह), (3) सान्द्रमेह, (4) सान्द्रप्रसादमेह, (5) शुक्लमेह (पिष्ट प्रमेह), (6) शुक्रमेह (7) शीतमेह (8) सिकतामेह (9) शनैर्मेह और (10) आलालमेह (लाला प्रमेह)।

पित्तजप्रमेह :

तेषंभिरतैः क्षाराम्ललवणकटुकिवस्रोष्णे पित्तगुनै पूर्ववत्त समन्विता भवन्ति। (चरक 4/24)

पित्तजप्रमेह में पित्त और मेदिमल करमूत्राशय में फूंच कर मूत्रत्व को प्राप्त होकर छः प्रकार के पित्तज प्रमेह के रुप में प्रकट होते हैं (1) क्षारमेह (2) कालमेह (3) नीलमेह (4) रक्तमेह (5) मंजिष्ठामेह (6) हरिद्रामेह।

वातजप्रमेह : वात को प्रकुपित करने वाले भोजन करने या वातप्रकोपक शारीरिक–मानसिक कार्य

करने से प्रकुपित वायु वसा को मूत्रवहा स्रोतस में पहुंच जाती है तब (1) वसामेह और मज्जा को मूत्र या मूत्राशय में ले जाती है तब (2) मज्जामेह और लसीका के मूत्राशय में पहुंचने पर (3) हस्तिमेह होकर अंत में ओज धातु जो कि मधुर स्वभाव वाला होता है वायु अपने रुक्ष गुण और कषाय रस से युक्त (4) मधुमेह को उत्पन्न करता है।

साध्यासाध्यता : दसों प्रकार के कफज प्रमेह साध्य अर्थात curable है। (चिकित्सा से ठीक किये जा सकते हैं) छहों प्रकार के पित्तज प्रमेह कई दोषों के मिले हुए होने, मेद स्थान से सम्बद्ध होने और दोष (पित्त) - दूष्य (मेद) के विरुद्ध उपक्रम अर्थात् (वात आदि दोष के लिए स्निग्धादि पदार्थ पथ्यहोते हैं वहीं मेद और दूष्य के लिए अपथ्य होते हैं) आदि होने के कारण याप्य अर्थात औषधोपचार और पथ्याचरणपूर्वक जीवन यापन किया जा सकता है और चारों प्रकार के वातज प्रमेह अत्यधिक अत्यधिक अर्थात मज्जा आदि धातुओं के अत्यधिक क्षय होने, दोष-दूष्य के विरुद्ध उपक्रम के कारण असाध्य अर्थात curable नहीं माना जाता है।

जिस व्यक्ति को प्रमेह होने वाला होता है, उससे पूर्व उस व्यक्ति के दांत, कण्ठ, जीभ और तालु में मैल जमता है, हाथ-पैरों में जलन होती है। शरीर में चिकनाहट (चिपचिपापन), मुंह में मीठापन होता है साथ ही प्यास भी बहुत लगती है। इन लक्षणों की उपस्थिति को देख कर प्रमेह की सम्भावना के प्रति सावधान होकर पूर्व में कहे गये प्रमेहों के अनुसार परीक्षण करना चाहिए।

पता : वेदमंदिर, सोंठी, तह. व जिला-सक्ती (छ.ग.)

आहार-निद्रा-भय-मैथुनानि समानि चेतानि नृणां पशूनाम्।
ज्ञानं नराणामधिको विशेषो ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः॥

अर्थात् : बोजन नींद डर संभोग में चार प्रवृत्ति मनुष्य और पशु में समान रुप से पायी जाती है। पशुओं की अपेक्षा मनुष्यों में केवल ज्ञान एक विशेष गुण है जो उसके अलग से प्राप्त है अतः ज्ञान बिना मनुष्य पशु समान है। निष्कर्ष : यहां पर मनुष्य के पशु से अलग होने का जो गुण बताया है वह है उसकी ज्ञान-शक्ति। ज्ञान से मनुष्य उन्नत होता है। ज्ञान से मनुष्य मोक्ष का अधिकारी बनता है। ज्ञान से मनुष्य में नैतिक गुणों का विकास होता है। नैतिक गुण है सत्य न्याय धर्म अहिंसा परोपकार दान विनयशीलता ये विकसित हुए तो मनुष्य अन्यथा पशु।

– सुभाषितम्

उपासना किसकी करनी चाहिए ?

राम, कृष्ण, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, हनुमान, गणेश, परशुराम आदि महापुरुषों की पूजा नहीं अपितु उनके आचरण को ग्रहण करना चाहिए। उपासना उस एक मात्र सर्वाधार, सर्वांतर्यामी सर्वशक्तिमान, सर्वश्रेष्ठ मंगलमय चैतन्य स्वरुप आनन्द स्वरुप निराकार परमात्मा अखण्ड सत्य सनातन परब्रह्म परमेश्वर की करनी चाहिए, जिसकी उपासना सभी महापुरुष और ऋषि मुनि करते आए हैं। ईश्वर एक ही है, अद्वितीय हैं, अनुपम हैं, अनादि है, अजन्मा है, अजर हैं, अमर हैं और मोक्षदाता है।

समाचार प्रवाह

भावभीनी श्रद्धाञ्जलि

माता परमेश्वरी देवी

रायगढ़ । गहरे शोक और संवेदना के साथ, छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य्र प्रतिनिधि सभा की ओर से पूज्य माता "श्रीमती परमेश्वरी देवी जी" के दिवंगत होने पर हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं । 21 जून 25 को उनका स्वर्गवास संपूर्ण समाज के लिए अपूरणीय क्षति है । वे न केवल एक आदर्श मातृशक्ति थीं, अपितु एक संस्कारशील, धर्मनिष्ठ एवं प्रेरणादायी व्यक्तित्व की धनी थीं, जिन्होंने एक तेजस्वी और राष्ट्रसेवी परिवार को जन्म व संस्कार दिए । उनका जीवन आर्यसमाज के मूल्यों और भारतीय संस्कृति की उच्चतम मर्यादाओं का प्रतीक था ।

माता परमेश्वरी देवी एक तपस्विनी, संस्कारी और अत्यंत प्रभावशाली व्यक्तित्व की धनी थीं । उनका संपूर्ण जीवन त्याग, सेवा और राष्ट्रभक्ति को समर्पित रहा । उन्होंने अपने परिवार को केवल प्रेम और अनुशासन नहीं, अपितु समाज सेवा की भावना से भी सिंचित किया । उनका जाना केवल एक परिवार की नहीं, अपितु सम्पूर्ण वैदिक समाज की अपूरणीय क्षति है । उन्होंने पति स्व. मित्रसेन जी के साथ आर्यसमाज और राष्ट्रहित के कार्यों में सदैव अग्रणी भूमिका निभाई । हम प्रार्थना करते हैं कि ईश्वर उनकी पुण्यात्मा को परम शांति प्रदान करें और उनके परिजनों को यह अपार दुःख सहन करने की शक्ति दें । सभा के प्रधान डॉ. रामकुमार पटेल ने माता परमेश्वरी देवी के जीवन और योगदान को नमन किया ।

एमडीएच के सहयोगी जितेंद्र भाटिया को आर्य समाज के राष्ट्रीय योगदान के लिए किया गया सम्मानित

» छत्तीसगढ़ प्रांतीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डॉ. राम कुमार पटेल ने दिल्ली वेद मंदिर में अंगवस्त्र और साल देकर किया सम्मान

एजेंसी@फिरञदूत

नई दिल्ली। रोहिणी - आर्य समाज व गुरुकुल की गतिविधियों के प्रचार-प्रसार और सामाजिक योगदान में सक्रिय भूमिका निभा रहे एमडीएच मसाला उद्योग के सहयोगी जितेंद्र भाटिया को विशेष सम्मान से नवाजा गया। यह सम्मान छत्तीसगढ़ प्रांतीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डॉ. राम कुमार पटेल द्वारा दिल्ली के वेद मंदिर (रोहिणी) में आयोजित एक गरिमामय समारोह में प्रदान किया गया।

डॉ. राम कुमार पटेल ने बताया कि जितेंद्र भाटिया और उनके संरक्षक राजीव गुलाटी (एमडी, एमडीएच मसाले) आर्य समाज, गुरुकुलों के विविध सामाजिक और धार्मिक गतिविधियों में लंबे समय से आर्थिक एवं नैतिक सहयोग प्रदान कर रहे हैं, जिससे देशभर में आर्य समाज व गुरुकुल की गतिविधियाँ सशक्त रूप से संचालित हो रही हैं।

इस अवसर पर भाटिया को साल और पारंपरिक छत्तीसगढ़ी अंगवस्त्र से सम्मानित किया गया, जो छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक विरासत का प्रतीक है।

समारोह में राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री आचार्य जीव वर्धन शास्त्री, आनंद आर्य, गर्भनिवास आर्य तथा अनेक आर्य कार्यकर्ता एवं समाजसेवी उपस्थित रहे। उपस्थित जनों ने तालियों की गड़गड़ाहट से भाटिया का अभिनंदन किया।

डॉ. राम कुमार पटेल ने इस अवसर पर छत्तीसगढ़ में संचालित आर्य प्रतिनिधि सभा एवं प्रांतीय आर्य वीर दल द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न गतिविधियों, गुरुकुलों की जानकारी दी। उन्होंने बताया कि शिक्षा, स्वास्थ्य, वेद प्रचार तथा सामाजिक सुधार के क्षेत्रों में लगातार प्रयास किए जा रहे हैं, जिसमें देश के अन्य राज्यों से भी सहयोग की आवश्यकता है।

कार्यक्रम का उद्देश्य न केवल योगदानकर्ताओं को सम्मानित करना था, बल्कि युवा पीढ़ी को आर्य समाज के सिद्धांतों से जोड़ने और समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए प्रेरित करना भी था।

संस्कृत व्यक्तित्व में सकारात्मक परिवर्तन लाती है -डॉ. अजय आर्य

दुर्ग । संस्कृत भारती एवं छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के संयुक्त तत्वावधान में 10 दिवसीय संस्कृत प्रशिक्षण शिविर का समापन हुआ । समापन कार्यक्रम में शहर के जाने-जाने संस्कृतविद कार्यक्रम में पहुंचे । संस्कृत मित्र मंडलप के अध्यक्ष के. आभा चौरसिया, अग्निदूत के सम्पादक आचार्य कर्मवीर शास्त्री, संतोष कुमार दुबे, अनुपम उपाध्याय, डॉ. महेशचन्द्र अलेन्द्र, डॉ. अजय आर्य, जैनेन्द्र कुमार दीवान, ईश्वरी देवांगन सहित अनेक संस्कृत प्रेमियों ने भाग लिया ।

डॉ. अजय आर्य ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि एक जंगल में शेर रहता है । यह लोगों को पता था और लोग उस रास्ते से नहीं जाते थे । कुछ दिनों तक वहां से कोई आवाज नहीं आई । फिर लोगों ने मान लिया कि शेर मर गया है । वर्तमान समय में हमारी स्थिति यही है । हमारी संस्कृति का मूल आधार संस्कृत में है । संस्कृत किसी के भी मुख में नहीं है । इसलिए उसे अनदेखी शेर की तरह से इसे भी लोगों ने मृत मान लिया । उन्होंने अभिभावकों को भी संस्कृत सीखने छात्रों को सपोर्ट करने के लिए कहा । संस्कृत संभाषण की कक्षाएं अभ्यास के लिए प्रति सप्ताह लगाने का भी अभिभावकों ने प्रस्ताव रखा । कार्यक्रम का संचालन प्रो. जैनेन्द्र दीवान ने किया । कार्यक्रम में निकिता, मेघाशुं, अक्षत, आर्यांश, जागृति, तनिष्का, दिशांक ने गणेश वंदना श्लोक पाठ मंत्र उच्चारण, संस्कृत में अपना अनुभव सुनना जैसे अनेक कार्यक्रम प्रस्तुत किये । अक्षत आर्यांश ने विष्णु का धारा प्रवाह पाठ किया । कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए आचार्य कर्मवीर ने कहा कि – संस्कृत वैज्ञानिक भाषा है । जिस जिस बात को खाने के लिये अंग्रेजी या हिन्दी में 5 शब्दों में प्रयोग किया जाता है। उसे संस्कृत मात्र एक शब्द में कहा जा सकता है । संस्कृत में दो अरब 75 लाख शब्द है ।

संतोष चौबे, आभा चौरसिया ने अपने विचार रखे। जैनेन्द्र दीवान ने सभी का धन्यवाद किया। अभिभावकों ने शिक्षकों का धन्यवाद किया । डॉ. अजय राना ने कहा कि संस्कृत सिर्फ भाषा नहीं है संस्कृत पढ़ने से संस्कार संस्कृति के प्रति रुझान बढ़ता है और व्यक्तित्व में सकारात्मक परिवर्तन आता है ।

– संवाददाता : प्रोफे. जैनेन्द्र दीवान

"अग्निदूत" के ग्राहक सदस्यों की सेवा में

E CHHATTISGARH PRANTIYA ARYA PRATINIDHI SABHA
Pay Directly to: 9893063960@indianbk

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के मासिक मुख पत्र 'अग्निदूत' के समस्त ग्राहक सदस्यों से निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क 100/- यथाशीघ्र सभा कार्यालय में भेज दें, जिससे कि उन्हें नियमित रुप से 'अग्निदूत' भेजा जाता रहे । जिन सदस्यों के शुल्क तीन वर्षों से अधिक बकाया हो, उनसे निवेदन है कि वे अपना दसवर्षीय शुल्क 1000/- रु. भेजें । इस कार्य को यथीशीघ्र प्राथमिकता से करें । अन्यथा इस मास से 'अग्निदूत' भेजना बंद कर दिया जायेगा । पत्र व्यवहार में अपना सदस्य संख्या तथा पूरा पता पिन कोड सहित अवश्य लिखें । छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का भारतीय स्टेट बैंक दुर्ग शाखा में सेविंग एकाउन्ट नं. 32914130515 आई.एफ.एस.सी. कोड **SBIN0009075** कोड नं. है । जिसमें आप बैंक की शाखा से आनलाईन शुल्क जमा कर सभा कार्यालय के दूरभाष नं. 0788-4225499 द्वारा सूचित करते हुए अलग से पत्र लिखकर अवगत करा सकते हैं । 'अग्निदूत' मासिक पत्रिका के सम्बन्ध में कोई भी शिकायत हो तो कृपया आचार्य जगबन्धु आर्य (कोषाध्यक्ष) से चलभाष नं. 9770331191 में सम्पर्क कर सकते हैं ।

कार्यालय पता :- 'अग्निदूत', दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.,) 491001 फोन : 0788-4225499

CHH-HIN/2006/17407

जून–2025

डाक पंजी.छ.ग./दुर्ग संभाग/99/2021-23

प्रेषक :
"अग्निदूत" हिन्दी मासिक पत्रिका,
कार्यालय–छ.ग. प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.) 491001

क्र. 206

हनुम... रोड, नई दिल्ली

अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लायसेंस नं. : TECH/1-170/CORR/CH-4/2019-20-21

भावभीनी श्रद्धाञ्जलि

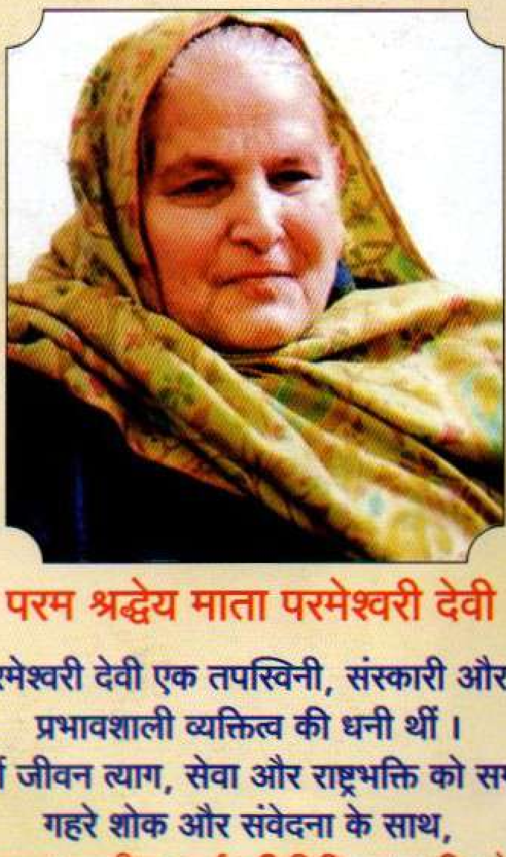

परम श्रद्धेय माता परमेश्वरी देवी

माता परमेश्वरी देवी एक तपस्विनी, संस्कारी और अत्यंत
प्रभावशाली व्यक्तित्व की धनी थीं।
उनका संपूर्ण जीवन त्याग, सेवा और राष्ट्रभक्ति को समर्पित रहा।
गहरे शोक और संवेदना के साथ,
छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से
पूज्य माता "श्रीमती परमेश्वरी देवी जी" के दिवंगत होने पर
हम प्रार्थना करते हैं कि
ईश्वर उनकी पुण्यात्मा को परम शांति प्रदान करें और
उनके परिजनों को यह अपार दुःख सहन करने की शक्ति दें।

डॉ. रामकुमार पटेल	अवनी भूषण पुरंग	जगबन्धु आर्य
प्रधान	मंत्री	कोषाध्यक्ष